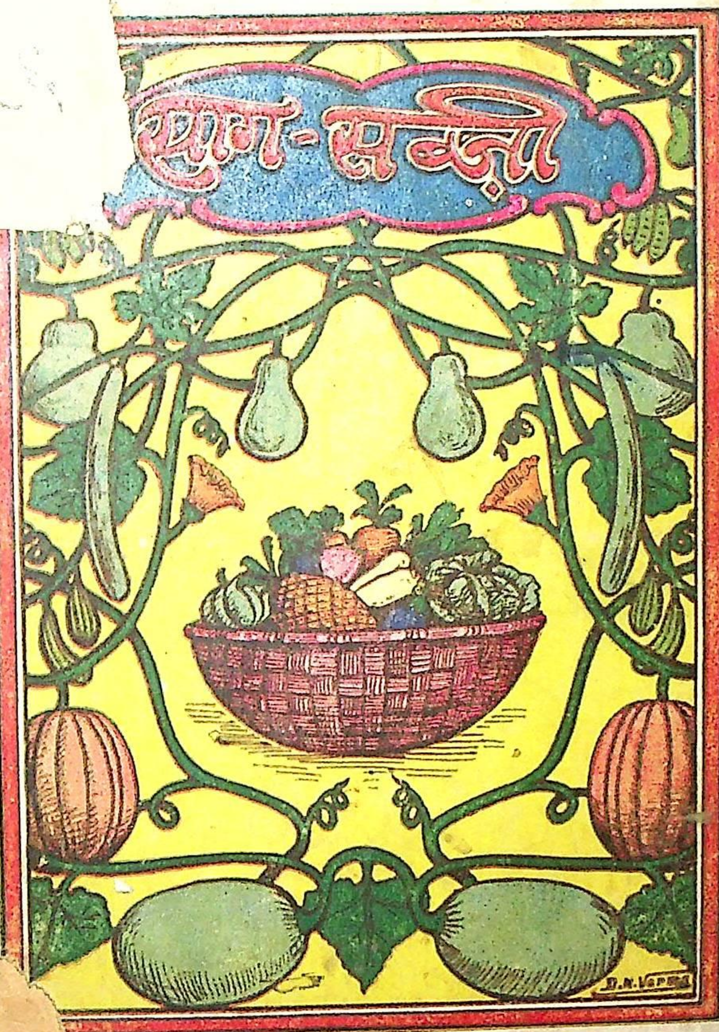
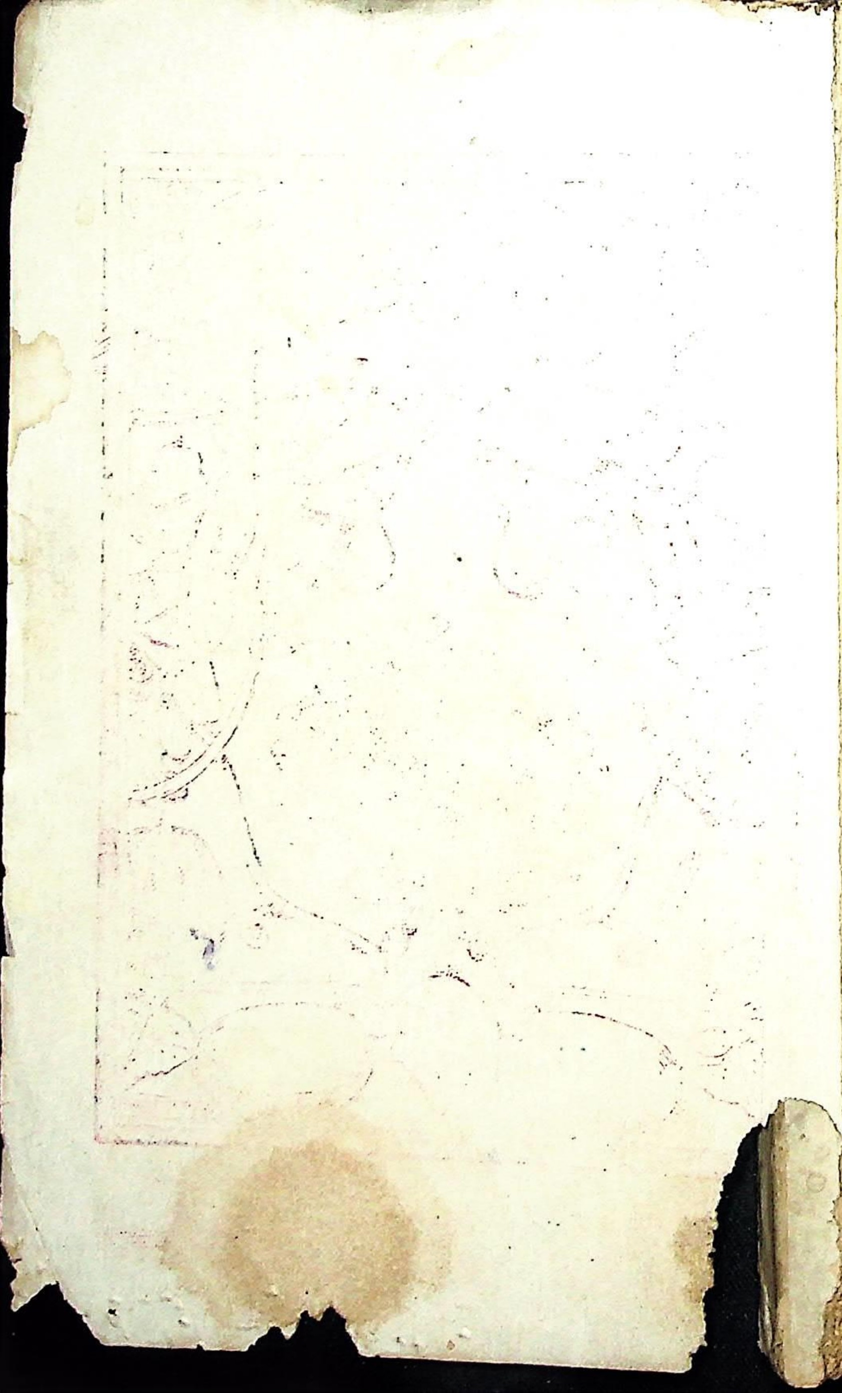


ँचवीं लेखक—पंडित कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय



साग-सब्जी

अर्थात्

शाक-भाजीकी खेती करनेकी लाभदायक विधि

लेखक—

पं० कार्त्तिकेयचरण मुखोपाध्याय



प्रकाशक

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी

ज्ञानवापी, बनारस।

[पाँचवीं बार] १९५२ [मूल्य १॥)

प्रकाशक
हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
ज्ञानवापी, बनारस।

शाखाएँ—
२०३, हरिसन रोड, कलकत्ता।
बाँकीपुर, पटना।

मुद्रक—
कृष्णगोपाल केडिया
वणिक प्रेस
साक्षीविनायक, बनारस

दो शब्द

प्राचीन हो या नवीन, यह बात सर्वथा विवेक-सिद्ध है, कि मनुष्य-जीवनकी चरम उन्नतिका प्रथम और प्रधान साधन धन या अर्थ है। धनके आगमके जो वैध मार्ग हैं, उनको स्थूलत: हम चार भागोंमें विभक्त देखते हैं। इन चारोंमें उत्तम कृषि कर्म माना गया है। किसीने कहा भी है—

उत्तम खेती, मध्यम बान।
निकृष्ट चाकरी, भीख निदान॥

यह बात और देशोंके लिये चाहे उतनी ठीक न बैठती हो, पर भारत जैसे कृषि-प्रधान देशके लिये तो सोलहो आने ठीक है। जिन देशोंमें कृषिके लिये उपयुक्त साधन नहीं हैं, उनकी बात अलग है। वे शिल्प-कला और उद्योग-धन्धे द्वारा तरह-तरहकी वस्तुओंका निर्माण कर संसारकी माँग पूरी कर अपना धन-भाण्डार भरते हैं। उनके लिये ऐसा करना सर्वथा औचित्यपूर्ण है। पर जिन देशोंको कृषिके सभी साधन स्वभावत: प्राप्त हैं, उनका पहला कर्त्तव्य कृषिकी ओर ध्यान देना और विज्ञानके सहारे कृषिको उन्नत दशामें पहुँचाना ही है। वर्त्तमान समयमें अमेरिका और रूस आदि देशोंने कृषि कार्यको अत्यन्त उन्नत दशामें पहुँचाकर अपने देशका धन-भाण्डार पूर्ण कर संसारको चकित-विस्मित कर दिया है।

उधर उनकी यह दशा है और हमारी दशा उनके सर्वथा विपरीत है। हमें न तो भर पेट भोजन मिलता है और न शरीर ढँकनेको वस्त्र। इसका मूल कारण यही है कि हमने अपने धनागमके प्रधान मार्गको युगोंसे अवज्ञाकी दृष्टिसे देखा है और सदा उसकी उपेक्षा की है। इस उपेक्षाका जो फल होना था, वही हुआ है। एक दिन वह था कि भारतकी भूमि रत्नप्रसू और अनन्त ऐश्वर्यकी खान समझी जाती थी। भारतकी इसी भूगर्भमें छिपी अनन्त रत्नराशिके लिये संसारके सभी देशवासी इसकी ओर लोलुप दृष्टिसे देखते थे और आज? आज हम अपने समस्त कृषि सम्बन्धी ज्ञानसे वंचित हो गये हैं और यह भी भूल गये हैं कि देशको समृद्धिशाली बनानेके लिये हमें सबसे पहले करना क्या चाहिये।

कृषक, किसान, खेतिहर या हलवाहा—ये सभी शब्द हमारे यहांके शिष्ट समाजके लिये अत्यन्त अपमान-सूचक समझे जाते हैं। शहरके लोगोंकी तो बात ही अलग है। गाँवोंमें भी जहाँ दो-चार सभ्य शिक्षित मनुष्य बैठे रहते हैं, वहाँ यदि कोई हलवाहा आ जाता है, तो लोग उसकी हँसी उड़ाये बिना नहीं रहते। मतलब यह, कि कृषि-कार्य करनेवाला सर्वथा घृणा, अवज्ञा और उपेक्षाका पात्र समझा जाता है। यह हमारे घोर मानसिक पतनकी अवस्थाका द्योतक नहीं तो और क्या कहा जा सकता है?

मनुष्यका ही नहीं, जीव-मात्रके जीवनका प्रधान उपाद

है भोजन-द्रव्य, और भोजनकी प्राप्ति होती है कृषिके द्वारा। ऐसे मूल्यवान कृषि-कर्मके प्रति उपेक्षाका भाव रखना मनुष्यके लिये अक्षम्य अपराध है और यह बात नहीं, कि इस अक्षम्य अपराधका हमें दण्ड न मिला हो। हमें पद-पदपर इसका दण्ड मिलता है, पर हमारी बुद्धि ऐसी मोटी हो गई है, कि हम उसे समझनेका भी प्रयास नहीं करते। इन बातोंको देखते हुए, हमारा पहला कर्त्तव्य यही है कि हम अपना पारिपार्श्विक वातावरण एकदम बदल दें और देशके कृषकोंको सम्मान और श्रद्धाकी दृष्टिसे देखें, क्योंकि वास्तवमें वेही उस जन समुदायके अन्नदाता हैं, जो कभी भूलकर भी यह नहीं सोचता कि वह जो अन्न खाता है, वह उपजता कैसे है? इस वातावरणको बदल देनेके बाद हमें कृषि सम्बन्धी गवेषणाओंका प्रचार करना होगा, विज्ञान-सम्मत सहज रीतियोंका अवलम्बन करना होगा और कम-से-कम परिश्रमसे अधिक-से-अधिक फसल तैयार करनेकी कलाका अनुशीलन करना होगा।

सन्तोषका विषय है कि ठोकरोंपर ठोकरें खाकर देशके शिक्षित जन समुदायके हृदयमें कृषि-कार्यके प्रति कुछ सहानुभूतिका संचार हुआ है। देशके महान् व्यक्तियोंका ध्यान ग्राम-संगठनकी ओर आकृष्ट हुआ है। ग्राम-संगठनके साथ कृषिका अविच्छिन्न सम्बन्ध है। जो लोग ग्राम-संगठनके काममें लगे हुए हैं, उनसे हम बारम्बार यही अनुरोध करेंगे कि वे कृषकोंमें कृषि-सम्बन्धी ज्ञानका प्रचार करनेके उपायोंपर विचार करें और

इन उपायोंको कार्यरूपमें परिणत करनेके प्रयत्नोंपर प्रकाश डालने-के लिये सदा सचेष्ट रहें।

यहाँ हम एक और बात कहे बिना नहीं रह सकते कि भारत-सरकारकी ओरसे कृषि-सम्बन्धी गवषणाओंके लिये जो कार्य पिछले वर्षोंसे हो रहा है, उसका प्रचार उन किसानों-में सम्यक् रूपसे नहीं हो पाता, जो इस विषयसे विशेष दिलचस्पी रखते हैं, तथापि जब देशवासियोंकी—विशेषकर शिक्षित जनताकी—रुचि कृषिकी ओर बढ़ेगी, तब सरकारी कृषिविभागसे हमें काफी सहायता मिलेगी, ऐसी आशा है। विहारके पूसा नामक स्थानमें जो कृषि-विद्यालय और गवेषणा-गार था, सम्प्रति वह वहांसे उठकर दिल्ली जा रहा है। इस प्रतिष्ठानमें जाने और वहांके कार्योंको सरसरी तौरपर देखने-का, इन पंक्तियोंके लेखकको कई बार अवसर मिल चुका है। यह प्रतिष्ठान वैज्ञानिक गवेषणाएँ तो काफी कर रहा है, पर इन गवेषणाओंके प्रचारके लिये, अबतक जैसा चाहिये वैसा उद्योग नहीं हो रहा है। हाँ, यह ठीक है, कि सरकार इस विषयकी ओर ध्यान दे रही है और हमारा अनुमान है कि ज्यों-ज्यों जनतामें कृषि-सम्बन्धी तथ्योंकी जानकारी हासिल करनेकी रुचि बढ़ेगी, त्यों-त्यों सरकारको भी अपना कार्यक्षेत्र बढ़ाना पड़ेगा, और तभी वैज्ञानिक गवेषणाओंको सफलता प्राप्त हो सकेगी। क्या हम आशा करें कि देशके वे कर्णधार, जिनका ध्यान इस समय ग्राम-संगठन और कृषिके सुधारकी

ओर लगा हुआ है, सरकारके सहयोगसे कृषि-कार्यके प्रचारके लिये भारतके प्रत्येक जिलेमें, प्रत्येक सबडिविजनमें और प्रत्येक थानेमें छोटी-छोटी कृषि-प्रयोग-शालाएँ स्थापित करनेका प्रयोग करेंगे ? इन प्रयोगशालाओंके द्वारा सम्यक् रूपसे भारतीय कृषि और कृषकोंकी उन्नति हो सकती है और कैसे, यह एक स्वतन्त्र विषय है। अतः यहाँ इस विषयकी चर्चा समीचीन नहीं होगी।

प्रस्तुत पुस्तक हमने उन शिक्षित और पठित लोगोंके हितके उद्देश्यसे लिखनेका प्रयास किया है, जिनके पास अपनी थोड़ी बहुत खेती है, पर जानकारीके बिना वे उससे उतना लाभ नहीं उठा पाते, जितना उन्हें उठाना चाहिये। केवल वेही नहीं, वरन् वे लोग भी इससे लाभ उठा सकते हैं, जिनके लिये खेतोंका कायम रखना असम्भव हो रहा है। हमारा मतलब उन लोगोंसे है, जो खेतोंसे कोई लाभ होता न देखकर ऊब उठे हैं और उन्हें बेच देना चाहते हैं। शाक सब्जी या हरी तरकारीकी खेती कर-कराके हमने पिछले ४—५ वर्षोंमें जो थोड़ा अनुभव स्वयं प्राप्त किया है उसके तथा अपने कई विशेषज्ञ किसान-मित्रोंके अनुभवके आधारपर यह पुस्तक प्रस्तुत करनेका प्रयास किया है। जिज्ञासु-जनोंका यदि कुछ भी उपकार इससे होगा, तो हम अपना प्रयास सफल समझेंगे।

एक बात और। जो लोग यह समझते हों कि शाक-सब्जी-की खेतीसे वैसा कुछ विशेष लाभ नहीं हो सकता, उनसे हमारा

कहना केवल यही है, कि सम्प्रति विज्ञानने यह सिद्ध कर दिखाया है, कि अन्न आदिकी अपेक्षा अधिक 'विटामिन' शाक भाजीमें है। अतः निकट भविष्यमें ही शाक-भाजीका प्रचलन वर्त्तमान समयकी अपेक्षा बहुत बढ़ जायगा, इसमें सन्देह नहीं और इसलिये इसकी खपत भी बहुत बढ़ जायगी। अतः इसकी खेतीको लाभदायक न समझना ठीक नहीं। आशा है, व्यवसायिक दृष्टि रखनेवाले लोग हमारे इस कथनसे सहमत होंगे और पुस्तककी उपयोगिताको समझेंगे।

अन्तमें हम इस पुस्तकके प्रकाशक और हिन्दी पुस्तक एजेन्सीके स्वत्वाधिकारी सुप्रसिद्ध साहित्यशिल्पी बाबू बैजनाथ जी केडियाको धन्यवाद देना आवश्यक समझते हैं, जिन्होंने इस पुस्तकको सुन्दर, सचित्र और चित्ताकर्षक रूपमें प्रकाशित करनेमें यथेष्ट अर्थव्यय और श्रम किया है।

कलकत्ता,
ता० १५, फरवरी १९३६ } —लेखक

निवेदन

ग्राम-संगठन और ग्रामीण जनताकी उन्नति जो धीमी आवाज़ देशके किसी किसी कोनेसे उठने लगी है, सम्भव है निकट भविष्यमें उसकी समुचित प्रतिध्वनि भी सुनाई दे और देशवासियोंका ध्यान सामूहिक रूपसे इस ओर आकृष्ट हो जाये। यद्यपि अभी ऐसा होनेका कोई सुस्पष्ट लक्षण नहीं दिखाई दे रहा है, तथापि इतना निश्चित है, कि भारतकी वास्तविक उन्नति यदि किसी दिन होगी तो वह ग्रामीणोंको लेकर और उन्हींके द्वारा होगी; क्योंकि भारतकी जो अक्षय सम्पत्ति और पूँजी है, वह ग्रामीण जनताके ही हाथोंमें है। परन्तु जिस बातकी सबसे अधिक आवश्यकता है, वह है ग्रामीणोंमें चेतना उत्पन्न करनेकी। संसारकी राजनीतिक और अर्थनीतिक प्रगतियोंसे सर्वथा अनभिज्ञ ग्रामीण किसानोंको अपनी उन्नतिका सच्चा रास्ता बताये बिना उनसे कुछ भी आशा नहीं की जा सकती है। ग्राम्य जनताको सबसे पहले जिस शिक्षाकी आवश्यकता है और जिसे ग्रहण करनेके लिये वे भी उत्सुक हैं, वह है उनके धनागमका द्वार उन्मुक्त करनेकी शिक्षा। ग्रामीणों, किसानों और काश्तकारोंके साथ जिनका घनिष्ट सम्बन्ध है, उनका अनुभव बताता है, कि आज सारे देशके किसान उस कामको करने या उस कलाको सीखनेके लिये हर तरहसे तैयार हैं, जिससे दो पैसे उसके घरमें आवें।

उनके भोजन और वस्त्र इतने मामूली ढंगके हैं, कि उसे वे किसी-न किसी प्रकार पूरा कर लेते हैं। खेतमें पैदा होनेवाला उत्तम अन्न बेचकर वे मुश्किलसे मालगुजारी अदा करते हैं। स्वयं मोटा नाज खाकर और सिर्फ गर्मियोंमें ही नहीं, जाड़ेमें भी प्रायः नंगे बदन रहकर वे अपना जीवन निर्वाह करते हैं। परन्तु जहाँ पैसा-का काम पड़ता है, और जहाँ पैसोंके बिना काम नहीं चल सकता है, वहाँ वे तड़प-तड़प कर रह जाते हैं। पैसोंके अभावको आजकल सबसे अधिक अनुभव कर रहे हैं—देशके अन्नदाता किसान।

सौभाग्यका विषय है कि महात्माजी जैसे अपनी लगनके पक्के महापुरुषका ध्यान ग्रामीणोंकी उन्नतिकी ओर विशेष रूपसे आकृष्ट हुआ है। ग्राम संगठनके लिये वे बहुत कुछ कर भी रहे हैं। इधर सरकार भी कृषि सम्बन्धी कुछ-न कुछ नवीन गवेषणाएँ करती है और चाहती है कि देशके किसान उन गवेषणाओंको उपयोगमें लायें। यह पुस्तक कुछ ऐसे ही विचारोंसे तैयार करायी और प्रकाशित की गई है, कि उससे ग्रामीण जनताका कुछ हित हो और उन्हें अपनी आय बढ़ाने का एक मौका मिले। ऐसी अवस्थामें क्या हम आशा करें, कि हिन्दी भाषा प्रान्तोंकी सरकारें अपने यहाँकी प्रत्येक ग्राम्य-पाठशालाकी लाइब्रेरीमें इस पुस्तककी एक-एक प्रति रखवाकर किसानोंको शिक्षामें सहायता पहुंचानेका प्रयोग करेंगी? उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और मध्य प्रदेशके जिला बोर्डों

और म्युनिसिपैलिटियोंके चेयरमैनोंसे भी हमारा अनुरोध है, कि वे स्वयं इस पुस्तकको देखें और इसकी उपयोगिताको समझकर अपने अधीनस्थ स्कूलों और पाठशालाओंमें इसे पाठ्य ग्रन्थोंमें स्थान देकर ग्रामीण छात्रोंमें वास्तविक और कार्यकरी शिक्षाका प्रसार करें। अन्तमें ग्राम-संगठनके कार्यमें भाग लेनेवाले देशके नेताओं और भाइयोंसे भी हमारा निवेदन है, कि ग्रामीणों-की उन्नतिकी जो चेष्टा वे कर रहे हैं, उसमें यह पुस्तक अवश्य ही उनकी किसी-न-किसी रूपमें बहुत कुछ सहायता कर सकती है।

इस पुस्तकके लेखक पं० कार्तिकेयचरण मुखोपाध्यायके इस विषयमें काफी जानकारी रखनेके कारण यह सिर्फ सिद्धान्त व्यक्त करनेवाली ही चीज नहीं बनी है, प्रत्युत एक व्यावहारिक वस्तु बनी है।

हमारा विचार शीघ्र ही इसी प्रकारकी और भी कई कृषि-सम्बन्धी उपयोगी पुस्तकें प्रकाशित करनेका है। यदि उपर्युक्त अधिकार-सम्पन्न व्यक्तियों तथा देशवासियोंने हमारे निवेदन पर समुचित ध्यान दिया और हमें प्रोत्साहन प्राप्त हुआ, तो हमें अपने विचारको कार्य-रूपमें परिणत करनेमें बहुत कुछ सुभीता होगा और इसलिये हम निकट भविष्यमें प्रकाशित होनेवाली कृषि-सम्बन्धी पुस्तकोंको और भी उत्तम रूपमें आपके सामने उपस्थित कर सकेंगे।

—प्रकाशक

विषय-सूची

पहली क्यारी

दूसरी क्यारी

तीसरी क्यारी

३—फलजातीय शाक-सब्जी

चौथी क्यारी

४—लताओंमें फलनेवाली साग-सब्जियाँ

पांचवीं क्यारी

———

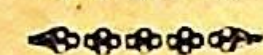
साग-सब्जी

पहली क्यारी

शाक-भाजीकी खेती करनेके पहले हमें क्या-क्या जान लेना अत्यावश्यक है

(खेत कैसा होना चाहिए यानी खेतकी पहचान—पानी या सिंचाईका प्रबन्ध—खाद और उसका प्रयोग—पौधा (अंकुर) तैयार करनेकी विधि—पौधेके दुश्मन और उनसे बचनेके उपाय—शाक-भाजीकी खेतीके लिये आवश्यक यन्त्रादि)

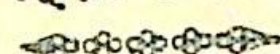
कहनेकी आवश्यकता नहीं कि कोई भी काम बिना विधिवत् सीखे अच्छे ढङ्गसे नहीं होता और न उस कामके करनेवालेकी इच्छानुरूप फल ही मिलता है। भारतीय कृषि और कृषकोंकी आज जो शोचनीय दशा हो रही है, यद्यपि उसके कई कारण निर्द्धारित किये जा सकते हैं, परन्तु सर्वप्रधान कारण उनकी कृषि-सम्बन्धी अज्ञानता ही है। जो लोग कृषिकार्यमें तनिक भी रुचि नहीं रखते और इस कार्यके गुरुत्वको नहीं समझते, वे शायद यही सोचते होंगे कि खेती करनेके लिये किसी



ज्ञानकी जरूरत नहीं है, परन्तु उनकी यह धारणा सर्वथा गलत है। यदि यही बात होती तो हमारे पूर्वज ऋषि मुनियोंने अथवा वर्त्तमान समयके बड़े-बड़े धुरन्धर वैज्ञानिकोंने कृषि कार्यके लिये एक स्वतन्त्र शास्त्रका निर्माण नहीं किया होता। सोचनेकी बात है कि जिन कृषि-जात वस्तुओंके बिना हमारा जीवन-निर्वाह होना असम्भव है, क्या उन वस्तुओंके उत्पादनके लिये हमें सतर्क और सावधान रहने अथवा उसके विषयमें नवीन गवेषणाएँ करनेकी कुछ भी आवश्यकता नहीं है ? नहीं ऐसी बात नहीं है। जमीन कोड़ना, उसमें बीज डाल देना और हो सके तो पानी सींच देना—इतना ही काम या इतनी ही जानकारी कृषिके लिये कदापि पर्याप्त नहीं है। अपने जीवन और स्वास्थ्यके लिये जिस प्रकार हमें बहुतेरी बातोंका ध्यान रखना पड़ता है. उसी प्रकार पौधोंके जीवन धारण एवं उनकी पुष्टिके लिये भी हमें बहुत कुछ जाननेकी जरूरत है, उनपर संक्षेपमें प्रकाश डाला जाता है।

खेत और उसकी पहचान

शाक-भाजी या हरी तरकारियोंका खेत साधारणतः कुछ ऊँची भूमिमें होना चाहिये, ताकि वह बरसाती पानीमें डूब न जाये। खेतकी मिट्टी न बहुत कड़ी हो और न एकदम बालूसे भरी। दूमट मिट्टी इस कामके लिये अच्छी होती है। जो खेत बरसातमें पानीमें डूब जाता है, वह शाक-भाजीके लिये



उपयुक्त नहीं होता, क्योंकि शाक-भाजीका खेत ऐसा होना चाहिये कि उसमें बारहों मास फसल मिलती रहे।

जमीन अगर बहुत ऊँची-नीची हो, तो उसे यथासम्भव बराबर कर लेना चाहिये। पानीकी निकासीका रास्ता अच्छा होना चाहिये। निकासीका रास्ता नहीं होनेसे वर्षाकालमें खेतमें या खेतके कुछ अंशमें बहुत पानी जम सकता है, जो साग सब्जी-के लिये बहुत हानिकारक है।

जमीन बहुत गीली या सीलवाली नहीं हो, बल्कि ऐसी हो कि उसमें सर्वत्र धूप और हवा लगती रहे। पौधोंके लिये जल जितना आवश्यक है, उतनी ही आवश्यक स्वच्छ धूप और हवा भी है। इनसे पौधोंका स्वास्थ्य अच्छा रहता है और उनमें कीड़ाका उपद्रव नहीं होने पाता।

जाड़ेके आरम्भमें जिस जमीनमें केंचुए अधिक दिखाई देते हैं, वह जमीन अच्छी साबित होती है। केंचुए(earth worm) मिट्टी खाते और मिट्टी ही विष्ठाके रूपमें निकालते रहते हैं। वे पौधोंको नुकसान पहुँचानेवाले कीड़े नहीं हैं। इनमें फासफोरस काफी मात्रामें होता है जिससे पौधोंको लाभ पहुंचता है। दूसरे ये कीड़े नीचेकी मिट्टीको ऊपर और ऊपरकी मिट्टीको नीचे किया करते हैं, इससे मिट्‌टीकी उर्बरा शक्ति बढ़ती रहती है।

शाक-भाजीकी खेतीके लिये दूमट मिट्टी सबसे अच्छी इसलिये मानी जाती है कि उसमें रस अधिक समयतक ठह-

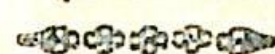


रता है। जब रस सूख जाता है, तब भी वह बहुत कड़ी और ठोस नहीं होती, कुदाल या हलसे वह आसानीसे कोड़ी जा सकती है। बालूवाली मिट्टी बहुत जल्द नीरस हो जाती है और चिकनी मिट्टी सूखनेपर इतनी कड़ी हो जाती है कि कोमल पौधेकी महीन जड़ें उसमें प्रवेश नहीं कर पातीं। अतः उक्त दोनों प्रकारकी मिट्टी शाक-भाजीके उपयुक्त नहीं मानी जाती।

दूमट मिट्टीवाला खेत यदि शहर या गाँवके आस-पास हो तो वह इस कामके लिये बहुत ही उत्तम है। इसमें एक तो खाद डालनेका सुभीता होता है, दूसरे, फसल तैयार होते ही उसकी खपत आसानीसे होने लगती है।

शाक-सब्जीके खेतमें घासकी निराई या सफाई हमेशा होती रहनी चाहिये। घासोंकी वृद्धि शाक भाजीकी वृद्धिको बहुत धक्का पहुंचाती है। इन घासोंको जड़ समेत उखाड़कर एक ओर जमा करके सुखा ले और बादको उन्हें जला डाले। यह राख खादके लिये उत्तम वस्तु है।

शहरके पासकी पड़ती जमीनमें भी शाक-सब्जीकी अच्छी उपज हो सकती है, यदि उसे खेतके काम लायक बना लिया जाये। मतलब यह कि पड़ती जमीनमें प्रायः ईंट-पत्थर और शीशेके टुकड़े बहुतायतसे पाये जाते हैं। ये पौधेके लिये बड़े ही खतरनाक होते हैं। पौधेकी जड़ इन कंकड़ों या ईंटके टुकड़ोंसे कोई रस तो पाती ही नहीं, बल्कि उनकी वृद्धि भी



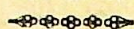
इनके कारण रुक जाती है। अतः ऐसे खेतकी भूमिको 'खट-चाल'* करा लेना बहुत जरूरी है।

जमीन ठीक करनेके लिये उसे बारम्बार जोतना भी बहुत आवश्यक है। पर एक ही क्यारीको हर दूसरे-तीसरे जोतना भी ठीक नहीं। एक बार जोतकर आठ-दस दिन छोड़ दे और फिर जोते। इससे मिट्टीकी भीतरी तहोंमें धूप और हवाका अच्छा असर पड़ता है और मिट्टीकी उत्पादका शक्ति बढ़ती है।

सिंचाईका प्रबन्ध

ऊपर यह कहा जा चुका है कि शाक-भाजीके लिये वही खेत उत्तम है, जो सीलसे खाली हो और जिसमें बरसाती पानी जमता न हो। इससे यह नहीं समझना चाहिये कि शाक-सब्जीके लिये सिंचाईकी जरूरत कम पड़ती है। सच तो यह है, कि शाक-सब्जीके खेतमें बरसातके सिवा प्रायः सभी ऋतुओंमें सिंचाई करनी पड़ती है। जिस खेतमें हम तरकारियोंकी खेती करें, उसमें यदि कुआँ (इनारा) हो तो अति उत्तम है। यदि नहीं हो और पासमें कहीं नदी या ताल हो तो उससे पानी लानेका प्रबन्ध अवश्य कर लेना चाहिये। सिंचाईके लिये मीठे पानीका होना बहुत जरूरी है। खारा पानी शाक सब्जी अथवा किसी भी चीजकी खेतीके लिये अच्छा नहीं है। सिंचाईका काम चाहे

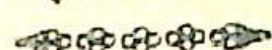
* खटचाल—एक प्रकारकी बड़ी सी चलनी जो देखनेमें खाट-कीसी होती है। उसे भूमिपर ४०।४५ डिगरीके कोणपर खड़ा करके कुदालके सहारे मिट्टी चाली जाती है।



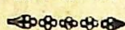
कुएँसे लिया जाये, चाहे तालाबसे या नदीसे, उसके लिये क्यारियोंमें नालियोंका होना आवश्यक है। यदि पानी बहुत दूर-से लाना पड़ता हो, तो तरकारीके खेतमें एक तरफ पानीका हौज बना लेना अच्छा है।

खाद और उसका प्रयोग

भूमि चाहे जितनी अच्छी और उर्बरा क्यों न हो, खादका प्रयोग उसके लिये भी परम आवश्यक है। चाहे जिस चीजकी खेती करनी हो, बिना खादके फसल अच्छी नहीं हो सकती। हाँ, कुछ चीजें ऐसी हैं जिनके लिये खादका प्रयोग साधारणतः लोग नहीं करते, जैसे धान, कोदो आदि। पर बात यह है कि धान जिन खेतोंमें होता है, वे प्रायः सालभर खाली ही पड़े रहते हैं, धानके सिवा उनमें और कोई उपज प्रायः नहीं होती और ये खेत स्वभावतः नीची और जलबहुल भूमिमें होते हैं। कहीं कहीं धानके बाद मसूरकी खेती होती है, फिर भी खेत प्रायः ६ महीनेतक खाली ही पड़े रहते हैं। खाली पड़ी रहनेके कारण जमीनकी उर्बरा शक्ति आपसे आप बढ़ती है। दूसरे, जब बरसाती पानी इन खेतोंमें चारों तरफसे आकर भरने लगता है, तब भी बहुत तरहकी खाद पानीके साथ आकर खेतकी शक्तिको बढ़ा देती है। तीसरे, धान आदिके पौधे अपना पोषक खाद्य अधिकांश जलसे ही पाते हैं। परन्तु शाक-भाजीकी खेती धानकी खेतीकी तरह नहीं है। इसके लिये खाद, पानी, धूप, हवा—इन सबकी जरूरत पड़ती है।



अपने यहाँ सबसे प्रधान खाद है— गोबर और खली। पर कच्चे और ताजे गोबर या खलीसे खादका काम लेना कदापि उचित नहीं। इनकी तेजी और गर्मीको कोमल पौधे सहन नहीं कर सकते। तरकारीके खेतमें एक तरफ जहाँ पानीके लिये हौज रखना आवश्यक है, वहीं कुछ दूरपर खादके लिये भी एक हौज रखना चाहिये अथवा कई छोटे-बड़े हौज बनवा लिये जाएँ, तो और भी अच्छा है। ये हौज चाहे पक्के न हों केवल जमीन खोदकर चौरस गड्ढे ही बना लिये जायँ तब भी काम चल सकता है। इन हौजोंमें खाद तैयार करते रहना चाहिये। किसीमें गोबर सड़ाते जाइये और किसीमें रेड़ी या सरसोंकी खली। किसीमें तालाबके नीचेकी सड़ी मिट्टी भरवाते जाइये और किसीमें घरका कूड़ा और बुहारन भी जमा कराते जाइये। तरकारी-बाग या फुलवारीमें जो पौधे, पत्ते या डालियाँ अथवा छिलके आदि काट-छाँटकर हम बाहर फेंकते हैं, उन्हें भी इन हौजोंमेंसे किसी एकमें जमा करते जाइये। ये सभी चीजें पौधोंके लिये उत्तम खाद हैं, शाक-भाजीकी खेती करनेवालेको साल भर खाद सञ्चय करते रहना चाहिये। आवश्यकतानुसार खादवाले हौजोंमें पानी भी छोड़ते रहिये, ताकि सब चीजें खूब सड़ जायें। यदि दुर्गन्ध फैलती हो, तो उनपर समय-समयपर ऊपरसे सूखी राख (उपलों या लकड़ियोंकी) डलवा दीजिये। सब्जी-बाग लगाने-वालेको अपना पहला वर्ष खेतकी भूमि और खाद तैयार करनेमें



ही लगाना चाहिये। साल भर सड़ानेके बाद इन खादोंको ऊपर खेतमें बखेरकर सुखा ले और चूर्ण करके आवश्यकतानुसार प्रयोग करनेके लिये रख छोड़े।

बीज बोने या उगे हुए अंकुर रोपनेके कमसे कम दो एक मास पहले खादको खेतकी मिट्टीके साथ मिला देना चाहिये। ऐसा करनेसे मिट्टी और खाद मिलकर एक वस्तु बन जाती है और पौधे जब अपनी जड़ें फैलाकर मिट्टीसे रस खींचने लगते हैं, तब उन्हें खादोंका उपयुक्त रस प्राप्त होता है। बीज बोते समय या दो चार दिन पहले खाद डालनेसे कोई फायदा नहीं होता।

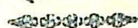
ऊपर जिन वस्तुओंसे खाद तैयार करनेकी बात कही गयी है, उनके अलावा जली हुई मिट्टी, भट्ठीकी मिट्टी या कुम्हारके आंवेंकी मिट्टी और राख, रसोई घरोंका भूल, जाला, तालाबकी सेवार, भेड़-बकरियोंकी लेंड़ी और नालोंकी सड़ी हुई मिट्टी भी शाक-सब्जीके लिये अच्छी खाद है। इन चीजोंको भी उपयुक्त प्रणालीसे सड़ा और सुखा ले, तब प्रयोग करे।

एक प्रकारकी खाद और है। इसे हरी खाद कहते हैं*। बोरो, अरहर, मेथी, नील, सनई, आदिके बीज खेतमें हल चलानेके बाद बो देते हैं। जब इनके पौधे ८।१० इञ्चके हो

---

* खादके सम्बन्धमें हमारे यहांसे 'खाद' नामकी एक स्वतन्त्र पुस्तक प्रकाशित हुई है। उसके कई संस्करण भी हो चुके हैं। मूल्य १॥) है। जो लोग खादके विषयमें विशेष जानकारी रखना चाहते हों, वे उक्त पुस्तक अवश्य मँगा लें।

—प्रकाशक

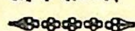


आते हैं तब जमीनको फिर फोड़कर या हल चलाकर इन हरे पौधोंको मिट्टीके साथ मिला देते हैं। इसके बाद जमीनको सींचकर और फिरसे जोतकर इच्छित वस्तुओंकी खेती की जाती है।

शाक-भाजीकी खेती करनेवालेको खादके प्रयोगमें न तो आलस करना चाहिये और न किफायत। साथ ही कुछ क्यारियों को इस तरह बारी-बारीसे खाली छोड़ देना चाहिये कि वे पुनः उर्वरा-शक्तिका सञ्चय कर लें। पड़ती छोड़नेके पहले उन क्यारियोंमें खादका प्रयोग करना न भूलें। पड़ती छोड़नेसे जो लाभ है, वह हम पहले ही बता आये हैं।

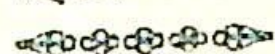
बीज और अंकुर या पौधा तैयार करनेकी विधि

शाक-भाजीकी खेती करनेवालेको जमीन तैयार करने, खाद बनाने और सिंचाई आदि कामोंकी मजूरी देनेमें जितना खर्च करना पड़ता है, उसकी अपेक्षा बहुत कम खर्च बीजके लिये करना पड़ता है। इसलिये बीज खरीदते समय बहुत सावधान रहना चाहिये। यदि धोखेसे आपने कम दाममें खराब बीज ले लिया, तो आपके सब किये-करायेपर पानी फिर जायगा। बीज जब ले तब या तो अपने जाने हुए खेती करनेवालेसे ले अथवा दाम कुछ अधिक होनेपर भी किसी विश्वासी दूकानदारसे खरीदे। मतलब यह कि बीज ही खेतीके लिये प्रधान चीज है। आजकल हमारे यहाँके सीधे-साधे किसान प्रायः बिना समझे-बूझे अथवा किफायतके खयालसे रद्दी-सद्दी बीज


मोल लेते हैं और जब उनकी सारी करी करायी मेहनत बेकार जाने लगती है, तब अपनी किस्मतको दोषी ठहराकर मत्थेपर हाथ पीटने लगते हैं। कृषि करनेवालेको स्वयं ही बीज संग्रह करना चाहिये। इसमें खर्च भी बहुत कम पड़ता है और बीज अच्छा एवं पुष्ट मिलता है। हाँ, जो लोग नये सिरेसे खेती करनेको तैयार होंगे, उन्हें तो बीज खरीदना ही पड़ेगा। अतः उन्हें सदा विश्वस्त स्थानसे उत्तम बीज देख-भालकर मँगाना चाहिये।

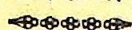
बीजसे पौधा तैयार करनेकी साधारणतः दो विधियाँ काममें लायी जाती हैं। कुछ पौधे ऐसे हैं जिन्हें एकबारगी खेतमें ही लगाना पड़ता है और कुछ ऐसे हैं, जिन्हें पहले दो या तीन बार हटा-हटाकर लगाना पड़ता है। पहले प्रकारके पौधे हटानेके कारण होनेवाले कष्टको (the effects of transplantation) सहन नहीं कर सकते। इसके विपरीत दूसरे प्रकारवाले पौधे स्थानान्तरिक करनेपर ही अच्छी दशा प्राप्त करते हैं।

जलवायु और ऋतुका पौधोंके जीवनके साथ अविच्छिन्न सम्बन्ध होता है। जिस बीजके अनुकूल जो ऋतु या जलवायु होगा उसमें वह बीज बड़ी आसानीके साथ और शीघ्र अंकुरित हो उठता है और पारिपार्श्विक अवस्थाको अनुकूल पाकर उसका पौधा भी नियमित रीतिसे बढ़ता तथा फल फूल देता है। ऋतु और जलवायुके प्रतिकूल बीज बोनेसे



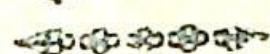
कभी सुफल नहीं होता। इसीलिये जो चीजें जाड़ेमें होती हैं, यदि उनके बीज हम गर्मीमें लगावें तो वे या तो अंकुरित ही नहीं होंगे या यदि अंकुरित भी होंगे, तो गर्मीको सह नहीं सकेंगे और सूख जायेंगे। इसी प्रकारका परिणाम गर्मीके मौसममें होनेवाली चीजोंके बीज जाड़ेमें बोनेसे दिखाई देता है। मतलब यह कि शाक-भाजीकी खेती करनेवालेको पहले यह जान लेना चाहिये कि किस मौसममें कौनसी चीज बोयी जानी चाहिये। किस चीजकी खेती कब की जाती है और कौन-कौनसे बीज एकबारगी खेतमें बोये जाते हैं एवं कौन-कौन बीज अंकुरित होनेपर स्थानान्तरित किये जाते हैं, इत्यादि बातें यथास्थान बतायी जायेंगी।

पुष्ट और अच्छे बीजोंके भी अंकुरित होनेका समय समान नहीं होता। जिन बीजोंके छिलके हलके और पतले होते हैं, वे तीन-चार दिनोंमें अंकुरित हो उठते हैं, पर जिनके छिलके कड़े और मोटे होते हैं, उनके अंकुरित होनेमें प्रायः ७।८ दिन और कभी-कभी १०।१२ दिन भी लग जाते हैं। जब बीज अंकुरित हो आते हैं, तब उनके आस पासकी जमीनको छोटी खुरपीसे हल्के हाथसे खोदते रहना चाहिये। इससे मिट्टी कुछ नरम रहती है और उसमें रस अधिक समयतक ठहरता है। पौधेकी कोमल जड़ोंका नरम मिट्टीमें प्रवेश करना सहज होता है। कुछ पौधोंके नवजात अंकुर इतने कोमल होते हैं कि वे तेज धूप या बहुत ठण्ड सहन नहीं कर सकते। कुछ पौधोंको

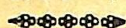


अंकुरावस्थामें बहुत सुरक्षित रखना पड़ता है। धूपसे बचाने-के लिये पत्ते प्राय: काममें लाये जाते हैं। जो पौधे बहुत ही सुकुमार होते हैं उन्हें गमलों, लकड़ीके बक्सों और टबोंमें पहले पाल-पोसकर बड़ा कर लेते हैं और तब उन्हें खुले खेतमें लगाते हैं। जो पौधे इस प्रकार पाले जाते हैं उन्हें धूप, ठण्ड और पानीसे बचानेके लिये छज्जेके नीचे लाकर रखना पड़ता है। हाँ, कोमल पौधोंके लिये प्रात: और सायंकालीन सूर्यरश्मि हानिकारक नहीं, वरन् लाभदायक सिद्ध होती है। सच तो यह है कि जिस प्रकार आदर-यत्नसे हम अपने बच्चोंका लालन पालन करते हैं, इस शिशु-पौधोंके लिये भी हमें ठीक वैसे ही मनोयोगसे यत्न करना चाहिये।

जिन पौधोंको स्थानान्तरिक करना जरूरी है उनके बीज बड़े गमलों या लकड़ीके खुले बक्सोंमें बोते हैं, ताकि पौधोंके उगनेपर दोपहरको धूपसे या रातको पालेसे बचानेके लिये उन्हें मैदानसे उठाकर छज्जेके नीचे ला सकें। इन गमलोंमें बारीक दूमट मिट्टीके साथ थोड़ा कोयलेका (लकड़ीका कोयला) चूरा मिला देते हैं। इसकी मिट्टीमें आधा भाग खादका होना चाहिये। खूब सड़ाये और सुखाये हुए गोबरका चूरा इसके लिये उपयुक्त खाद है। गमलों या बक्सोंकी मिट्टी बराबर करके, सतहसे चौथाई या आध इञ्च नीचे बीज रखकर ऊपरसे मिट्टी भुरभुरा दे। इसके ऊपर हल्का पुआल बिछा दे और तब आवश्यकतानुसार थोड़ा-थोड़ा पानी छिड़क दे। जब दो-चार

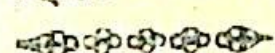


बीज अंकुरित होते दिखाई दें, तब पुआलको सावधानीसे हटा दे। पानी देते समय सावधान रहना चाहिये। ऐसा न हो कि पानीके धक्केसे पौधे टूट जायें या गिर पड़ें। अतः हौले हाथों-से फुहारें देना अच्छा है। जब पौधोंमें चार-पाँच पत्ते उग आवें और उनकी जड़ कुछ मजबूत जान पड़े, तब उन्हें पहले की अपेक्षा बड़े आकारके बक्सोंमें ५।५ या ६।६ उँगलीकी दूरी पर लगावें। ये बड़े बक्स भी पहलेसे पौधे लगानेके लायक तैयार रहने चाहिये। इसी प्रकार एक बार और कुछ बड़े होनेपर पौधोंको और भी बड़े स्थानमें स्थानान्तरित करना चाहिये। इसके बाद मिट्टीके छोटे-छोटे टबों (गमलों या गिलासों) में एक-एक पौधा अलग-अलग बैठाना चाहिये। फिर जब पौधोंकी जड़ें कानी उँगलीके समान मोटी हो जायें तब—यानी लगभग १ महीने बाद—उन्हें खुले खेतमें क्यारियोंके बीच बैठाना चाहिये। इस प्रकार पौधोंको २।३ बार उखाड़ने और बैठानेके समय यह ध्यान रखना चाहिये कि उनकी जड़ें टूट न जायें। खेतकी क्यारियोंमें लगानेके समय यदि पौधोंको एक बड़े हौजमें धो लिया जाये, तो और भी अच्छा हो। इन्हें खेतमें लगानेका सबसे अच्छा समय दिनके ५ बजेसे सन्ध्या ७ तकका है। यदि बादल घिरे हों और पानी होनेकी उम्मीद हो तो २।१ दिन ठहर जाना अच्छा है। खेतमें रोपनेके बाद भी तीन-चार दिनोंतक इन्हें तेज धूपसे बचाना चाहिये।



पौधोंके दुश्मन और उनसे बचनेका उपाय

मनुष्य अपने लाभके लिये कितने कष्ट सहकर पौधे उगाता और उन्हें बड़ा करना चाहता है; पर संसारमें ऐसे असंख्य जीव हैं, जो अपने लिये कोई उद्योग नहीं करते। वे दूसरोंके परिश्रमसे अपनी उदर-दरी पूर्ण करना चाहते हैं। शाक-सब्जी की खेतीके दुश्मन भी ऐसे ही हैं। छोटे-छोटे कीड़ोंसे लेकर विशाल शरीरवाले गाय, बैल, भैंस, साँड़ आदि सभी शाकाहारी पशु खेतीके दुश्मन बन जाते हैं। गाय, बैल आदि बड़े पशुओंसे त्रास पाना फिर भी सहज है; परन्तु साहिल, खरहे, चूहे और कीड़े-मकोड़ोंके अत्याचारोंसे पौधोंको बचाना बड़ा ही कठिन हो जाता है। इसके लिये सबसे अधिक आवश्यक है—निगरानी रखना। भेड़, बकरी या गाय-भैंससे बचनेके लिये हम अपने सब्जी-बागको कांटेदार तारोंसे घेर सकते हैं। खरहे, चूहे और साहिल आदिके लिये हम दो-एक कुत्ता पाल सकते हैं। कुत्ते तालीम दे लेनेपर रक्षाका काम बहुत अच्छी तरह कर सकते हैं। अब रह गये कीड़े-मकोड़े; और पौधोंके लिये येही सबसे भयंकर शत्रु हैं। इन अवांच्छित और अपरिहार्य शत्रुओंसे बचनेके लिये कोई अहिंसात्मक प्रयोग है या नहीं, और है तो वह कहाँतक कार्यकारी है— यह मालूम नहीं। पर साधारणतः जो लोग कृषिकार्य करते हैं, वे इनके संहार के सिवा दूसरा उपाय नहीं जानते और हमें भी वही उपाय बताने पड़ेंगे।



नित्य प्रातःकाल और सन्ध्यासे पूर्व सब्जी-बागके हरएक हिस्सेमें घूम-घूमकर बड़े ध्यानसे पौधोंका निरीक्षण करते रहना चाहिये। पौधोंकी वृद्धि और उनके ह्रासकी ओर सदा लक्ष्य रखना चाहिये। बीजसे उगे हुए पौधे कभी-कभी बिना किसी प्रत्यक्ष कारणके ही जड़से टूटकर गिर पड़ते हैं। इन गिरे हुए पौधोंको जड़ सहित उखाड़कर क्यारियोंसे अलग कर देना चाहिये। जड़ खोदते समय ध्यानसे देखना चाहिये कि मिट्टीके भीतर कीड़े तो नहीं हैं। यदि हों तो, उन्हें भी सावधानीके साथ खेतसे दूर फेंक देना चाहिये या जला डालना चाहिये। वहाँकी तथा आस पासकी जमीनमें कपूर या गन्धकका चूर्ण बिखेर देना चाहिये। हल्दोका बारीक चूरा किरासन तेलमें घोलकर वहाँकी जमीनमें छिड़क देनेसे भी दीमक आदि कीड़े नष्ट हो जाते हैं। कभी-कभी पौधे जमीनके लवणाक्त भागसे भी गिर पड़ते हैं। यदि यही बात हो और कीड़े न हों तो गोबर या खली सड़ाकर तरल रूपमें पौधोंकी जड़में सींच देना उचित है। इससे लवणाक्त भाग नष्ट होता है। राख छींट देना भी कीड़ोंसे बचनेका एक अच्छा उपाय है। यदि किसी पौधेके पत्ते स्वाभाविक रीतिसे बढ़ने और फैलनेकी जगह उलटे सिकुड़ते रहें और ऐसा मालूम हो मानों उनमें कोढ़ हो गया है, तो उन पत्तोंको डण्ठल सहित तोड़कर जला डालिये। बहुत ही छोटे कीड़े पत्तियोंकी उत्पत्तिके समय ही उनपर बैठ जाते और उनका रस चूसने लगते हैं। इसीलिये



ये पत्ते सिकुड़ते जाते हैं। ये कीड़े एकसे दूसरे पौधोंमें बहुत शीघ्र संक्रमित होते हैं और पौधोंका यह कुष्ठ-रोग संक्रामक रोगकी तरफ फैलने लगता है। अतः इन कीड़ोंसे सदा सावधान रहना चाहिये। वाटिकाके अन्य पौधोंको बचानेके लिये यदि एक पौधा उखाड़ देना भी पड़े, तो वैसा ही करना उचित है। एक पौधेके मोहसे और-और पौधोंमें रोग संक्रमित होने देना कदापि उचित नहीं।

बहुतेरे उड़नेवाले कीड़े भी होते हैं, जो कोमल पौधोंको चाट जाते हैं। ये पत्तोंको छेद बना डालते हैं। शाक भाजीके खेतोंमें ये बहुतायतसे होते हैं और पौधोंको हानि भी काफी पहुंचाते हैं। इनसे पौधोंकी रक्षा करनेके लिये बड़ी और मजबूत पिचकारियोंका सहारा लेना पड़ता है। पिचकारियाँ ऐसी हों, कि उनसे असंख्य धाराओंमें पानी निकले। १ गैलन पानीमें २ आउन्स 'यूकेलिप्टस आयेल' मिलाकर घोल तैयार करो और यही घोल 'हजारी पिचकारियों' के सहारे पौधोंपर छिड़क दो। पौधोंको तमाखूके हल्के घोलसे नहला देना भी कीड़ोंसे बचाता है। एक बाल्टी पानीमें छटाँकभर तमाखू खूब घोल दो और यही पानी पिचकारीसे पौधोंपर छिड़क दो। पौधों-पर छिड़कावका यह काम सूर्यास्तके समय आधे घण्टे बादतक करना अच्छा है।

इसके अलावा सब्जी-बागमें जगह-जगह सूखे पत्ते, सूखी घास और पुआल आदि सन्ध्याके बाद जलानेकी व्यवस्था भी

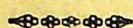
कीड़ोंके विनाशके लिये करनी पड़ती है। कीड़े अपने आप ही उड़कर आगमें पड़ते और भस्म हो जाते हैं।

छोटी-छोटी चींटियाँ भी कभी-कभी सब्जीकी खेतीको काफी नुकसान पहुँचाती हैं। खेतमें बीज छींटने या बोनेके बाद जब वे अंकुरित होनेकी तैयारी करते हैं, तभी ये चींटियाँ उन्हें खाने और ढो-ढोकर अपने घर ले जाने लगती हैं। इनसे बचनेके लिये क्यारियोंमें जहां-तहां पत्तोंपर थोड़ा-थोड़ा गुड़ रख देना अच्छा है। इससे ये बीजोंकी ओर न जाकर मीठेको खाने लगती हैं। बहुतेरे लोग चींटियोंके एकत्र हो जानेपर वहीं आग जला देते और उन्हें भस्म कर डालते हैं, पर वह काम बड़ा ही निष्ठुर जान पड़ता है। सूखी राख, कपूर या किरासन तेल छिड़क देनेपर भी चींटियाँ भाग जाती हैं। पर किरासन तेल छिड़कनेसे कभी-कभी पौधे भी जल जाते हैं इसलिये यह प्रयोग हानिकारक भी हो सकता है।

आवश्यक सामान

साग-भाजीकी खेती करनेवालेको जमीन जोतनेके लिये हल, पाटा, कुदाली और सिंचाईके लिये लट्ठा, कूंड़, मोट आदि चीजोंके अतिरिक्त और भी कुछ चीजोंके रखनेकी जरूरत होती है। पूरी किताब पढ़ लेनेपर ही उन चीजोंके ठीक-ठीक प्रयोग मालूम हो सकेंगे। फिर भी जानकारीके लिये यहाँ उनका आभासमात्र दे दिया जाता है।

१—आठ-दस खुरपियाँ—ये खुरपियाँ विभिन्न आकार-प्रकार



वाली हों। कुछ घास साफ करनेके लिये, कुछ जमीनको उलट-पुलट करते रहनेके लिये, कुछ क्यारियोंमें मेंड़ बनानेके लिये कुछ पौधोंको स्थानान्तरित करनेके लिये और कुछ पानी सींचनेके नाले बनानेके लिये चाहिये। जिससे जैसा काम लेना हो, उसका आकार प्रकार वैसा ही होना चाहिये।

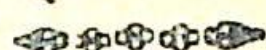
२—तीन-चार छोटी बड़ी छुरियाँ—इन छुरियोंसे कभी कोई डाल छाँटने, पत्ता काटने और कभी 'अंकुरदान* की मिट्टीको, कोमल पौधों या अंकुरोंकी बगलमें उसकानेका काम ले सकते हैं। एक दो छुरा दाँतदार हँसियाकी तरह भी रखनी चाहिये।

३—पिचकारी—छोटी बड़ी तीन चार पिचकारियाँ भी जरूर रखें। इनमेंसे किसीमें २-४ छेद हों तो किसीमें बहुतेरे, ताकि पानी फव्वारेकी तरह निकल सके। पिचकारियाँ पीतलकी हों या बाँसकी, यह खेती करनेवालेकी हैसियतपर और इच्छापर निर्भर है, पर टीनकी पिचकारियाँ टिकाऊ नहीं होतीं।

४—अंकुरदान—जो लोग शौकिया सब्जी-बाग लगाना चाहते हैं और केवल दो-एक कट्ठे जमीनमें खेती करना चाहते हैं, वे भले ही अंकुरदान न रखें और आस-पासके

---

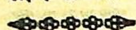
* अंकुरदान उस बक्स, गमले या चौकेको कहते हैं जिसमें स्थानान्तरित किये जानेवाले पौधोंके बीज अंकुर उत्पन्न करने और उन्हें बढ़ानेके लिये लगाये जाते हैं।



किसी किसान भाईसे चारे मँगा लिया करें, पर जो लोग बदस्तूर खेती करना चाहते हैं, उनका तो इन अंकुरदानोंके बिना काम ही नहीं चल सकता। बहुतेरे लोग अपने सब्जी-बाग-के लिये गोभी, बैंगन आदि स्थानान्तरिक किये जानेवाले पौधोंके चारे या अंकुर बाजारसे मोल मँगाया करते हैं, पर इन बाजारू चारों या अंकुरोंसे उनका काम नहीं चल सकता। जो कमसे-कम दो चार या पाँच-सात बीघेमें शाक-भाजीकी खेती करना चाहते हैं, उन्हें कमसे-कम १०-१५ अंकुरदान रखना चाहिये। अंकुरदान मजबूत लकड़ीके खुले हुए बक्स हैं। उनमें हैण्डल लगे हुए हों ताकि उन्हें खुले मैदानसे उठाकर छज्जेके नीचे लाना आसान हो।

५—छोटे-बड़े मिट्टीके गमले—जिसको जितने खेतमें खेती करनी हो, उसे उसी अनुपातसे गमले रखने पड़ेंगे। इन गमलोंके नीचे सुराख होना जरूरी है। जब स्थानान्तरिक किये जानेवाले पौधे अंकुरदानमें बड़े हो चुकते हैं, तब उन्हें इन गमलोंमें लाकर पालते और बड़ा करते हैं। कमसे कम एक हजार गमले तो अवश्य ही रखने होंगे। जितने अधिक गमले आप रखेंगे, उतना ही अधिक आपको सुभीता रहेगा।

६—अच्छे और मजबूत दो-तीन टार्च—इनका रखना भी जरूरी है। इससे अन्धेरी रातके वक्त खेतकी रखवाली करनेवाले-को बड़ा सुभीता होता है। लालटेन या और किसी प्रकारकी रोशनीसे टार्चका कार्य नहीं लिया जा सकता।



७—रखवाली और आत्मरक्षाके हथियार—कमसे-कम दो-चार मजबूत लाठियाँ, दो-एक बर्छी-भाले और गुलेल तथा मिट्टी-की गोलियाँ—ये सब चीजें रखवालीका काम करनेवाले किसानके पास हमेशा मौजूद रहनी चाहिये।

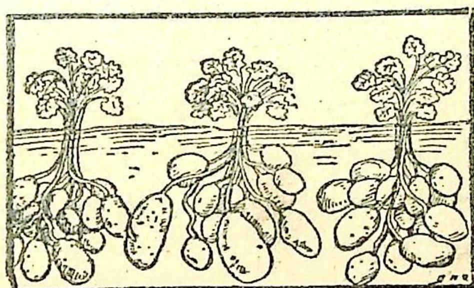
इन चीजोंके अतिरिक्त पौधोंको काटने-छाँटनेके लिये एक कटार, दो-एक छोटी बड़ी कैंची, क्यारियाँ सुन्दर और सुदृश्य बनानेके लिये कुछ रस्सी और खूँटीका भी काम पड़ता है। साग-सब्जीकी खेती करनेवालेको काम शुरू करते समय इन सभी चीजोंको एकत्र कर लेना चाहिये।

अंकुर या पौधे तैयार करनेके समय छज्जेका काम पड़ता है। तेज धूप और आँधी-पानी या ओलोंसे कोमल पौधोंको बचानेके लिये छज्जोंके बिना काम नहीं चल सकता। पर जो छज्जा खेत या तरकारी-बागके पास बनाया जाये, वह सदा खेतकी उत्तरी सीमाकी तरफ हो। दक्षिण, पश्चिम या पूरबमें छज्जा तो क्या, बड़ा पेड़ या लताओंका मचान होना भी हानिकारक होता है। जाड़ेके दिनोंमें जब सूर्य दक्षिण दिशामें रहते हैं, तब इनसे धूपका आना रुक जाता है, पश्चिम और पूरबमें भी आड़ करनेवाली कोई चीज नहीं होनी चाहिये।



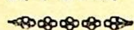
दूसरी क्यारी

कन्द या मूल-जातीय शाक-भाजी

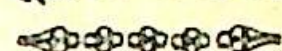


आलू

आजकल शाक-भाजियोंमें आलूने एक प्रधान स्थान अधिकार कर रखा है। सभी श्रेणियों और अवस्थाओंके लोग इसे पसन्द करते हैं। इसमें स्टार्चका भाग अधिक रहता है। शाक-सब्जीके रूपमें खानेके अतिरिक्त इसके द्वारा और-और काम भी लिये जाते हैं। यह खानेमें स्वादिष्ट तो होता ही है, लाभदायक और पुष्टिकारक भी होता है कितने ही लोग तो केवल नमक और मिर्चके चूर्णके साथ उबाले हुए आलुओंका ही जलपान करते हैं। बालक-वृद्ध सभी बड़े शौकसे आलू खाते हैं। कुछ लोग सफाईके खयालसे इसके पतले छिलकेको उतार कर तरकारी बनाते हैं, परन्तु ऐसा करना ठीक नहीं


है। इसके ऊपरी आवरण और गूदेके बीचके भागमें ही इसका सार-पदार्थ रहता है, जो छिलका उतार देनेके साथ ही नष्ट हो जाता है। वैज्ञानिकोंका कहना है कि आलूको ऊपरसे अच्छी तरह धोकर साफ कर ले और बिना छिलका उतारे उबाल ले। बादको छिलका उतारे। इससे इसका सार-भाग (विटामिन) गूदेमें आ जाता है। उबाले हुए आलुओंको तलकर और मसाले मिलाकर बहुत बढ़िया कचौरियाँ बनती हैं—समोसे भी बनते हैं। धीमी आँचमें आलू पकाकर खानेसे तो और भी सुस्वादु लगता है। मतलब यह कि आलूको हम बहुत प्रकारसे अपने भोजनके काममें लाते हैं।

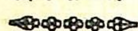
यह एक प्रकारका कन्द जातीय शाक है; पर मूली, गाजर, शलगम आदिसे यह कुछ भिन्न प्रकारका है। मिट्टीके अन्दर पहले पौधेकी जड़ें फैलती हैं और उनके सूक्ष्म तन्तुओंमें ये गाँठकी तरह निकलते हैं। क्रमशः रस पाकर इनका आकार बढ़ने लगता है। खेती उत्तम रीतिसे की जानेपर एक-एक पौधेमें काफी फल लगते हैं। कहते हैं, आलू भारतवर्षमें पहले नहीं होता था और इसका जन्मस्थान दक्षिण अमेरिका है। यह भारतीय भाजी नहीं है, इसका कुछ प्रमाण अब भी मिलता है। कुछ नैष्ठिक हिन्दू जो अब भी पुराने संस्कारोंके अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं, वे आलू गोभी आदिको अखाद्य और निषिद्ध मानते हैं। इससे यह अनुमान किया जा सकता है, कि विदेशी होनेके कारण ही लोगोंने इसे



निषिद्ध करार दिया होगा। परन्तु ऐसे लोगोंकी संख्या अब नहीं-के बराबर रह गयी है और आलूकी खेती भी इस देशमें क्रमशः तेजीसे बढ़ती जा रही है।

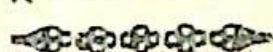
मुलायम दूमट मिट्टीमें आलूकी फसल अच्छी होती है। यदि आपके खेतकी मिट्टी कड़ी और चिकनी हो, तो उसमें राख मिलाकर पोली और हल्की बना सकते हैं। आलू जरा रसदार जमीन चाहता है। पर सीलवाली जमीन आलूके लिये सर्वथा हानिकारक है। असाढ़-सावनके महीनेमें खेतको भली-भांति जोतकर उसमें खादका प्रयोग करना चाहिये। खेतको कमसे कम तीन-चार बार जोत-कोड़कर पाटा चलाना चाहिये।

पुराना, सड़ा हुआ और सूखा गोबर और खलीकी खाद आलूके लिये उत्तम है। बङ्गालमें लोग रेंड़ीकी खली पसन्द करते हैं और बिहारमें नीमकी खली। आलूके खेतोंमें गोंयठे, घास-पात या कूड़े कतवारकी राख भी डालनी चाहिये। इससे आलूमें लगनेवाले कीड़ोंका उपद्रव नहीं होता। प्रति दूसरे वर्ष आलूके खेतमें यदि हरी खादका प्रयोग किया जाये, तो फसल अच्छी होती है। सनई या बोरोके बीज छींट दे और जब उनके पौधे उग आयें और ८–१० इञ्चके हो जायें तो उनके ऊपरसे हल चला दे और जमीनको खूब उलट पलट दे, ताकि वे पौधे जड़ समेत नष्ट हो जायें और मिट्टीके साथ खूब घुल-मिल जायें। बीघा पीछे ५।६ गाड़ी पुराने गोबरकी खाद,



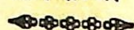
१२–१४ मन खली और १०–१५ टोकरी राखका प्रयोग करना चाहिये। जमीनमें खाद डालनेका और खेतकी मिट्टी तैयार करनेका काम असाढ़-सावनमें ही कर लेना चाहिये। इससे मिट्टीके साथ मिलकर खाद 'समरस' हो जायेगी। इस काममें देरी होनेसे, खादसे आपको जो लाभ होनेवाला है, वह पूर्ण मात्रामें नहीं होगा। कुछ लोग भादों आश्विनतक खेत तैयार करते हैं और तैयार होते ही आश्विनके अन्तसे लेकर कार्त्तिकके अन्ततक आलू बोते हैं। परन्तु इससे उतना लाभ नहीं होता, जितना होना चाहिये। हमारे विचारसे सावनके अन्ततक अथवा अधिकसे अधिक भादोंके मध्यतक जमीन तैयार करनेका काम खतम हो जाना चाहिये। यदि सावनतक जमीन तैयार हो जाये तो आश्विनके मध्य भागसे और यदि भादोंके मध्यतक जमीन तैयार हो तो कार्त्तिकके आरम्भमें आलूकी बोनी शुरू कर देनी चाहिये। हाँ, एक बातका ध्यान अवश्य रखना चाहिये, वह यह कि जमीन ऐसी हो कि भादों या आश्विनमें उसमें पानी बहुत जमने नहीं पाये और न ऐसी हो कि तैयार किये-कराये खेतकी सब मिट्टी हो पानीके बहावमें बह बहकर निकल जाये।

आलूकी बुवाई प्रायः सर्वत्र दो प्रकारसे की जाती है। पहली परिपाटी आलूको अंकुर सहित बोनेकी और दूसरी आलूके अँखुवोंको बचाकर कई टुकड़े करके बोनेकी है। पूरे आलुओंको अंकुर सहित बोनेमें उतनी दिक्कत नहीं होती। पर

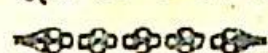


कटे आलुओंको बुवाईके लिये कुछ विशेष सावधानीकी आवश्यकता है। अँखुवेवाले आलूके जब टुकड़े कर लिये जाते हैं, तब उन्हें दो दिन घरमें राखके ढेरपर रख देना उचित है। इससे कटे हुए भाग कुछ सूख जाते हैं और उनके सड़नेका कोई डर नहीं रहता। जो बीज लगाये जायें वे पुष्ट अवश्य हों। सड़े हुए या मुर्दार बीजोंका खेतमें लगाना हानिकारक ही सिद्ध होता है। एक बीघेमें पूरे आलूके बीज तीन-चार मनतक और काटे जानेवाले आलूके बीज एक-डेढ़ मनतक लगते हैं।

बुवाई शुरू करनेके पहले खेतको फिरसे जोत और ढेले तोड़कर मिट्टी भुरभुरा कर लेना चाहिये। अब खूँटों और रस्सीकी मददसे पूरे खेतको अपने सुभीतेके अनुसार कई भागोंमें बाँट लो। इसके बाद हर एक क्यारीमें डेढ़-डेढ़ हाथ की दूरीपर लम्बी लकीरें खींचो। इन लकीरोंपर एक बालिश्तकी दूरीपर ४।५ अंगुल गड्ढेमें एक-एक बीज बोते चले जाओ। गड्ढेमें अंकुर ऊपर रखकर बीज डालो और ऊपरसे बारीक मिट्टी भुरभुराते जाओ। बीज बोनेके समय भूमिमें रसका होना जरूरी है। जो पूरे आलू अंकुर सहित बोये जाते हैं, वे ७।८ दिनमें और कभी-कभी १०।१२ दिनमें पत्तियाँ फेंकते हैं। बोनेके एक सप्ताह बाद एक बार पानी पटा देना चाहिये। पानी पटानेके बाद जब भूमि कुछ सूख जाये, तो खुरपीसे उसे भुरभुरा कर देना चाहिये। जब पौधे


४।५ इञ्चके हो जायें, तो उनकी जड़ोंमें मिट्टी भरते चले जाओ। जड़ोंमें मिट्टी भरते समय दो धारियोंके बीचमें पानीके लिये नाली छोड़ते जाओ। पौधे जब कुछ और बड़े हो जायें तब फिर नालीसे मिट्टी काटकर पहलेकी मेंड़पर चढ़ा दो। इस प्रकार कई बार करना पड़ता है और हर बारमें नाली कुछ पतली होती जाती है और मेंड़ें मोटी। आलूकी खेतीमें सिंचाईकी ओर पर्याप्त ध्यान रखना चाहिये और यह काम खेतके प्रकार-भेदपर निर्भर करता है। कहीं हर चौथे दिन कहीं हर आठवें और कहीं हर पन्द्रहवें दिन सिंचाई करनी पड़ती है।

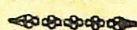
तीन महीनेमें आलूकी फसल तैयार हो जाती है। पर इन तीन महीनोंमें रखवालीकी ओर काफी ध्यान रखना पड़ता है। सूअर, साहिल और चूहे आदि इसके खास दुश्मन हैं। साहिल बड़ा ही भयंकर होता है। इसका सारा शरीर बड़े कड़े काँटोंसे ढँका रहता है। यह जब क्रुद्ध होता है, तब इसके रोंगटे-रूपी वे कांटें एकदम खड़े हो जाते हैं, और यह सामनेसे आक्रमण करनेवालेपर अमित वेगसे उछल पड़ता है। यह अपने तेज काँटोंसे आदमीका अङ्ग-अङ्ग छेद डालता है। इसे कई उपायोंसे पकड़ते हैं। सबसे सहज उपाय यहाँ बताया जाता है। खेतोंकी रखवाली करनेवाले प्रायः मचान बाँधकर उसीपर रात बिताया करते हैं। बीच-बीचमें आहट पाकर वे पशुओंको खदेड़ा भी करते हैं। यदि वे अपने पास



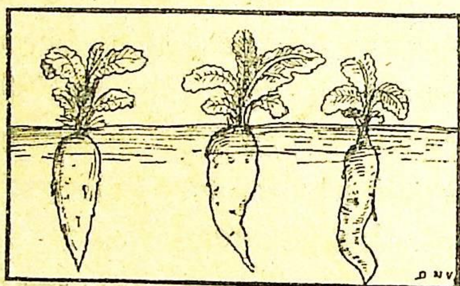
केलेके मोटे-मोटे हाथ-हाथ भरके थम्भ रख लिया करें, तो वे बड़ी आसानीसे इन्हें पकड़ सकते हैं। पहले देख लो कि साहिल मचानके पास आ गया है। इसके लिये टार्चसे भी काम लिया जा सकता है। पहले उसे क्रुद्ध बनानेके लिये बिना कुछ बोले-चाले २-१ माटीके ढेले फेंको। जब वह क्रुद्ध हो जाये तो एक-आध कंकड़ी और फेंको। अब तो वह मारे गुस्सेके तमतमा जायेगा और अपने काँटोंको खड़ा कर देगा। इसी समय खूब निशाना साधकर ऊपरसे केलेका थम्भ छोड़ दो। उसके काँटे आप ही उसमें धँस जायेंगे। फिर फौरन उतर पड़ो और दो-चार लट्ठ जमा दो। इतनेसे वह आप ही काबूमें आ जायेगा। यह बड़ा ही मजबूत जानवर है। कहीं-कहीं छोटी जातिके लोग इसे खाते भी हैं।

इसके अतिरिक्त सवेरे-शाम पौधोंका निरीक्षण भी करते रहना चाहिये। कभी-कभी हरे रङ्गके कीड़े इनकी जड़ खोद डालते हैं और ऊपरसे देखनेवालोंको सिर्फ यही मालूम होता है कि पौधा मुर्झा रहा है। ऐसे पौधोंकी जड़ खोदकर कीड़ोंको नष्ट कर डालना चाहिये। अन्यान्य दृष्टिगोचर होनेवाले कीड़ोंसे भी सावधान रहना चाहिये।

व्यावसायिक दृष्टिसे आलूकी खेती बहुत अच्छी और लाभदायक है। यह अन्यान्य हरी तरकारियोंकी तरह जल्दी खराब भी नहीं होता और यदि हिफाजतसे रखनेका प्रबन्ध हो, तो बादमें दाम भी अच्छा-खासा मिलता है। बीघेमें आलू ५० से लेकर ८०।६० मनतक फलता है।

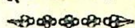


मूली



यह भी कन्द-जातीय शाक है। इसकी कोमल पत्तियोंका शाक बनता है और मूल या कन्दका भी। मूली कच्ची खायी जाती है और पक्की भी। यह पाचन शक्ति बढ़ाती है, अग्नि जगाती है और मूत्राशयका शोधन करती है। यह औषधियोंके काम भी आती है। मूली विशुद्ध भारतीय वनस्पति है। आयुर्वेदमें इसके बहुत गुण बताये गये हैं। मूत्रकृच्छ्र रोगमें इसका क्वाथ या काढ़ा पिलाते हैं। यह रुचिवर्द्धक खाद्य है।

मूली भी दूमट और मुलायम मिट्टीमें अच्छी होती है। इसका खेत जितना ही अधिक जोता जायगा, फसल उतनी ही अच्छी होगी। लम्बे फलवाले हलोंका प्रयोग करना मूलीकी जोतके लिये बहुत ही आवश्यक है। कुश्ती लड़नेके अखाड़ेकी तरह इसकी मिट्टी पोली और नरम हो, तो बहुत अच्छी मूली होती है। मिट्टी जितनी ही नरम और भुरभुरी होगी, मूलीको बढ़ने और फैलनेका उतना ही अधिक मौका मिलेगा।



गोशालाका कूड़ा-कतवार, सड़ा और सूखा गोबर और खली इसके लिये उत्तम खाद है। खादकी कमीके कारण मूली आकार-में बहुत छोटी रह जाती है और इसलिये खेती करनेवालेको पूरा दाम नहीं मिलता है। अतः खाद या जुताईमें किसी प्रकार कोताही नहीं करनी चाहिये। बीघा पीछे १ गाड़ी गोबर* दो मन खली और ४।५ टोकरी राखकी खाद मूलीकी खेतीके लिये आवश्यक है।

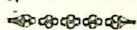
मूली एक ऐसी चीज है, जिसकी खेती प्रायः सालभर कर सकते हैं। पर भिन्न-भिन्न ऋतुओंके लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के बीजोंका होना जरूरी है। अभी हमारे यहाँ इसकी खेती अधिकांश स्थानोंमें जाड़ेमें की जाती है और कहीं-कहीं दो बार भी की जाती है। एकको बरसाती कहते हैं और दूसरोको अगहनी या नेवार।

बरसाती मूलीके लिये बैसाख-जेठमें जमीन तैयार करनी पड़ती है और आषाढ़के आरम्भमें बीज बो देना चाहिये। पर मँहगी बेचनेके लिये कहीं-कहीं लोग बैसाख-जेठमें ही बो देते हैं। बरसाती मूलीकी खेतीकी जमीन ऐसी होनी चाहिये कि उसमें पानी रुकने या जमा होने न पाये। जमीन कुछ

* खादके विषयमें जहाँ कहीं गोबर शब्दका प्रयोग किया गया है, वहीं उसका मतलब ताजा गोबर नहीं बल्कि सड़ाया और सुखाया हुआ गोबर ही समझना चाहिये। कच्चे और ताजे गोबरका प्रयोग खादके रूपमें करना किसी भी अवस्थामें वांछनीय नहीं है।

ढालू हो, तो और भी उत्तम है। अगहनी मूलीके लिये आश्विन के आरम्भमें ही बीज बो देना चाहिये। कहीं-कहीं लोग भादोंमें भी बीज बोते हैं और कात्तिकमें उनकी फसल तैयार हो जाती है। जो लोग कात्तिकमें बीज बोते हैं, वे पूसके मध्यमें फसल काटते हैं। बरसात और जाड़ेकी बात तो हो चुकी। अगर आप गर्मीमें भी मूली उपजाना चाहते हैं, तो झांझर मचानके नीचे उपजा सकते हैं। ये मचान बाँसकी फट्ठियोंके बने हुए हों और उनके ऊपर इधर-उधर थोड़े ताड़ खजूर या नारियलके पत्ते फैला दें, ताकि तेज धूपसे कोमल पौधोंका बचाव हो जाये। इसके लिये आपको फागुनमें ही खेत तैयार कर रखना होगा और चैतके मध्य या अन्तमें बीज भी बो देना होगा। ऐसा करनेपर बैसाखके अन्तमें और जेठके आरम्भमें ही आप मूली पा सकेंगे। गर्मीके दिनोंमें मूली बहुत ही रुचिकर लगती है, इस समय दाम भी काफी मिल सकता है, क्योंकि लोग बड़े शौकसे असमयकी यह चीज खरीदेंगे।

जमीन तैयार हो जानेके बाद भुरभुरी मिट्टी और राखके साथ बीजोंको मिलाकर बोनेसे अच्छा है। बीज बोते या छींटते समय इसका ध्यान रखना चाहिये कि कहीं बहुत घने बीज एक जगह न गिर पड़ें और न ऐसा हो कि कुछ दूरकी जमीनमें एक भी बीज नहीं गिरे—वह बिलकुल खाली ही रह जाये। राख मिलाकर बीज छींटनेसे एक लाभ और भी होता है। अंकुरित होनेपर पौधोंमें कीड़े नहीं लगते।



जब पौधे अंकुरित हो जाते हैं, तब खेतोंमें सोहनी या निरौनी* करनेकी जरूरत पड़ती है। इससे वह घास उखड़ जाती है जो व्यर्थ ही जमीनका रस खींच लेती है। दूसरे जमीनका कड़ापन दूर हो जाता है और मूलीको फैलनेका मौका मिलता है। तीसरा लाभ यह होता है, कि भूमिकी सरसता और उर्वरता बनी रहती है। निरौनी करते समय मूलीके, भूमिके बाहर निकले हुए अंशोंको भी मिट्टीसे ढँक देना चाहिये।

बरसात और जाड़ेमें होनेवाली मूलीको सींचनेका काम बहुत कम पड़ता है; पर गर्मियोंमें जो मूली उपजायी जाये उसमें ८।१० दिन बाद एक बार पानी पटाना परम आवश्यक है। जब पौधे कुछ बड़े हो जायें, तब एक साथ बहुत घने उगे हुए पौधोंको अलग-अलग कर देना चाहिये। देशी मूलीके हर दो पौधोंके बीचमें कमसे कम ६ अंगुल और अधिकसे-अधिक एक बालिश्त-का अन्तर होना चाहिये। जो पौधे बहुत घने होते हैं, उनमेंसे किसीको भी अपनी पुष्टिके लिये न तो पूरा रस मिलता है और न बढ़नेके लिये पूरा स्थान ही मिलता है।

बीज बोनेसे मूली तैयार होनेतक कुल एक डेढ़ मासका समय लगता है। यदि बारहो मास मूली उपजानी हो, तो क्यारियाँ बाँटकर जेठसे शुरू कर हर महीनेमें दो बार बीज बोइये। एक तरफ बोते रहिये और दूसरी तरफ उखाड़ते जाइये।

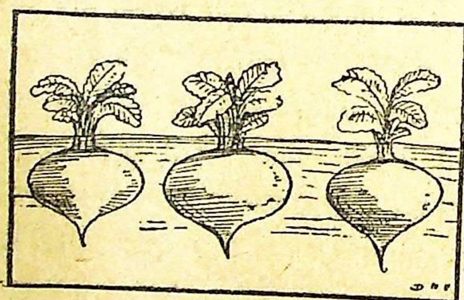
---

* सोहनी या निरौनी—खुरपीके सहारे घासोंको जड़से साफ करने और पौधोंकी जड़की मिट्टी पोली करनेकी क्रियाको कहते हैं।



मूलीके पौधोंपर भी एक प्रकारके कीड़े धावा करते हैं वे कीड़े बड़ी तेजीसे संख्यामें बढ़ते हैं और जहाँ उन्हें हटानेमें लापरवाही हुई कि वे तमाम खेतको ही उजाड़ कर दे सकते हैं। इसलिये पौधोंका निरीक्षण करते रहना चाहिये और ज्योंही इन कीड़ोंका पता चले, त्योंही उन्हें नष्ट करनेके लिये तमाखू या तूतियेका घोल* प्रयोगमें लाना उचित है।

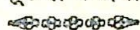
शलगम



शलगम विदेशी शाक है। परन्तु पिछले १५-२० वर्षोंसे इसका प्रचलन भारतमें बहुत बढ़ गया है। इसका कन्द, जो

---

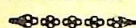
* एक बाल्टी पानीमें ४।५ पत्ते खैनीके भिंगो दे। दो दिन बाद इसे कीड़ोंपर पिचकारीसे छिड़क दे। यह तमाखूका घोल है। एक बाल्टी पानीमें दो पैसेका तूतिया छोड़ दे। यही तूतियेका घोल है। तूतिया पंसारीके यहाँ मिलती है और इसे अंगरेजीमें सलफेट-आफका-पर कहते हैं।



खाद्यके काममें लाया जाता है, बहुत ही सफेद और कोमल होता है। कहते हैं, इसमें श्वेत-सार अधिक मात्रामें रहता है। इसमें एक प्रकारकी तीखी गन्ध भी होती है। इसलिये बहुतेरे लोग इसे खाना पसन्द नहीं करते। कुछ लोग इसे उतारकर पानी फेंक देते हैं और बादको घी या तेलमें तलकर और मसाले डालकर तरकारी बनाते हैं। ऐसा करनेपर गन्ध बहुत कुछ दूर हो जाती है। यह भी मूलीकी तरह हाजमा बढ़ाता है और फायदेमन्द है।

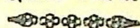
शलगमके लिये वैसी ही मिट्टीकी जरूरत होती है, जैसी मूलीके लिये। यह भी जाड़ेके मौसममें तैयार होता है। भादों से कार्तिकतक इसका बीज बोया जाता है। पर इसके बीजसे पौधा तैयार करके तब उन पौधोंको खेतमें बैठाते हैं। इसके लिये जमीन काफी पोली होनी चाहिये, ताकि यह आसानीसे फैल सके। ठोस मिट्टीमें यह सिकुड़कर छोटा रह जाता है। जमीनको खूब जोत कोड़कर उसके ढेले फोड़कर मिट्टी भुरभुरी कर ले। एक बीघेमें १५-२० टोकरी गोबरकी खाद काफी होती है।

शलगमके लिये 'अंकुरदानों' की जरूरत पड़ती है। दो या तीन बड़े-बड़े अंकुरदानोंमें काफी पौधे उपजाये जा सकते हैं। बरसात बीत जानेके पहले ही यदि आप अंकुर तैयार करना चाहते हों, तो खाद युक्त मिट्टीके साथ उसका दसवाँ हिस्सा कोयलेका चूरा या राख और थोड़ीसी बालू मिला लीजिये। इससे न तो कीड़ोंका भय रहेगा और न बीजके

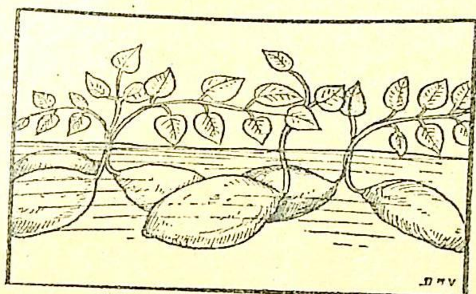

सड़नेका ही। अंकुरदानकी मिट्टीको खेतकी मिट्टीकी अपेक्षा भी कोमल रखना चाहिये। वह बिलकुल भुरभुरी हो। बीज बोने के बाद ऊपरसे थोड़ी और मिट्टी भुरभुरा दीजिये। फव्वारेसे हौले-हौले पानी छिड़किये। जब अंकुर निकल आवें और हरएक पौधेमें ४-६ पत्ते हो जायें, तो उन्हें दूर-दूरपर बैठानेका प्रबन्ध करना चाहिये। जब उनके पत्ते कुछ और बड़े हो जायें। (यानी अंकुरित होनेके १०।१२ दिन बाद) तब उन्हें अंकुर-दानोंसे निकाल कर खुले खेतमें लगाना चाहिये। खेतमें सीधी लकीरें खींचकर उन्हीं लकीरोंपर एक-एक फुटकी दूरी पर लगाना चाहिये। इनकी जड़ोंमें, आलूके पौधोंकी तरह, मिट्टी भरकर मेंड़े और सिंचाईके लिये नालियाँ भी बना लेनी चाहिये। १२।१४ दिनके अन्तरसे जड़ोंकी मिट्टी खुरपीसे पोली कर देनी चाहिए। मिट्टी भरते समय यदि मेंड़ोंकी मिट्टीमें थोड़ी-थोड़ी खलीकी खाद डाल दें, तो शलगम सरस सुस्वादु और उत्तम होते हैं। ज्यों-ज्यों शलगम बड़े होते जायें, त्यों-त्यों उनकी जड़ोंमें मिट्टी भरते जाइये। वे बाहर निकले नहीं रहें। धूप लगनेसे स्वाद बिगड़ जाता है।

शलगम प्रायः दो महीनेका समय लेता है। कभी-कभी इसके पहले भी उखाड़ा जाता है। देशी शलगमका बीज अभी तक बहुत अच्छा तैयार नहीं हुआ है। इसलिये प्रायः लोग विदेशी बीजसे ही पौधे तैयार करते हैं। एक बीघेके लिये पाव भर बीज काफी होता है।

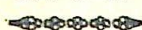
दूसरी क्यारी



शकरकन्द



यह विशुद्ध भारतीय मूल जातीय शाक है। यह दो प्रकारका होता है—एक लाल और दूसरा सफेद। यह जैसा ही पौष्टिक है, वैसा ही सुस्वादु। यह परम सात्विक खाद्य माना जाता है। उबालने या धीमी आँचमें पकानेपर यह मक्खनकी तरह मुलायम हो जाता है। मीठापन इसका स्वभाव-सिद्ध गुण है। इसमें खटाई और मीठा डालकर खट-मीठी चटनी भी बहुत अच्छी बनती है। इसके लम्बे, पतले और चपटे चकत्ते काटकर घीमें तल लीजिये और नानखताईका स्वाद लीजिये। कितने ही लोग इसे टुकड़े-टुकटे कर सुखा लेते और पीसकर आटा बना लेते हैं। इसके आटेसे रोटी, पूरी, कचौड़ी, हलुआ सब कुछ बन सकता है। बिहारके कुछ हिस्सेमें इसकी खेती इतनी अधिक होती है कि वहाँकी ग्रामीण जनता महीनों एक शाम इसीका आहार करके रह जाती है। वैज्ञानिक गवेषकोंका कहना है कि इसमें दुग्ध, शर्करा, मण्ड आदि सभी शरीरपोषक पदार्थोंका समावेश पाया जाता है।



दूमट भुरभुरी मिट्टी इसकी खेतीके लिये उपयुक्त होती है। इसके पौधे लतरदार होते हैं। पर इसकी लताके लिये मचान बाँधनेकी जरूरत नहीं पड़ती। बीघा पीछे १॥-२ गाड़ी गोबरकी खाद काफी होती है। जोत गहरी और अच्छी होनी चाहिये। आलूकी तरह इसे मेड़ोंमें नहीं बैठाते हैं, बल्कि दो-दो या तीन-तीन हाथकी दूरीपर गोल या चौकोर घेरे तैयार करते हैं और उन्हीं घेरोंके बीचों-बीच इसकी गेंड़ी ❀ बोते हैं। ये घेरे हाथ-हाथ भर चौड़े-लम्बे हों। इन घेरोंकी मिट्टी खेतकी मिट्टीसे ४-६ अंगुल ऊँची हो और उसके चारों ओर मेंड़ हो, जिसमें पानी पटानेपर वह निकल न जाये। पर बरसाती पानी जमने देना ठीक नहीं।

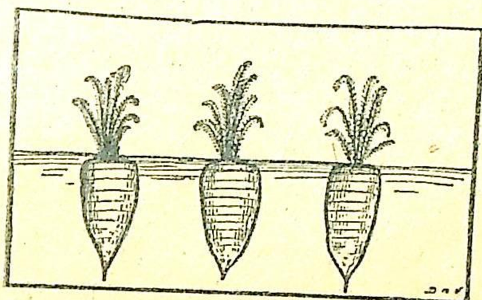
इस प्रकार जमीन और घेरे तैयार कर लेनेके बाद उनके बीचोबीच पुरानी लताके टुकड़े या अँखुएदार शकरकन्दके टुकड़े बैठाये जाते हैं। लताके या शकरकन्दके हर एक टुकड़ेमें कमसे कम तीन आँखें (या गांठें) जरूर हों। लताके टुकड़ों को ४।६ इञ्च गहरेमें डाल देते हैं और थोड़ासा अंश बाहर रखकर बाकीको मिट्टीसे ढँक देते हैं। जमीनका रस समझकर समय-समयपर पानी सींचते रहना चाहिये।

इसके बीज वपनका समय वैशाख-जेठ या आश्विन कार्त्तिक है। शकरकन्दकी फसल तैयार होनेमें प्रायः ४।५ मासका समय लगता है। यानी जो बीज वैशाख-जेठमें लगाये जाते हैं, उनकी फसल कातिकसे लेकर पूसतक पा सकते हैं और जो बीज

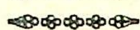
❀ इसका बीज नहीं होता—लत्तियाँ ही टुकड़े-टुकड़े कर बैठायी जाती हैं अथवा अँखुवे लगाये जाते हैं।

आश्विन-कार्तिकमें लगते हैं, उनकी फसल माघसे चैततक पा सकते हैं।

गाजर



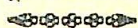
यह वास्तवमें कोई भारतीय वनस्पति नहीं है यूरोपमें पहले इसकी खेती होती थी। पर यूरोपियन लोगोंके यहाँ आनेके बादसे इसकी खेती यहाँ काफी बढ़ गयी है—यहाँतक कि प्रायः सभी प्रान्तोंके दूरस्थ गाँवोंतक इसका प्रचार हो चुका है। गाजरमें लौह काफी मात्रामें रहता है। इसे कच्चा तो खाते ही हैं, इसका हलवा भी बहुत स्वादिष्ट और लाभदायक होता है। विदेशी बीजोंसे उपजनेवाली गाजर अच्छी कोटिकी और देशी बीजोंसे होनेवाली कुछ निम्न कोटिकी मानी जाती है। घोड़ा और गोजातिके लिये गाजर बहुत ही लाभदायक खाद्य समझा जाता है। गौओंको गाजर खिलानेसे दूध बहुत ही मीठा, स्वादिष्ट और घना तो होता ही है, परिमाण भी बढ़ जाता है।



गाजरका ऊपरी छिलका और मध्यसे इसकी रीढ़ निकालकर फेंक देते हैं। इन दोनोंके बीचका गूद्दा ही हमारे खानेके काममें आता है; पर पशु सब समेत खाते हैं। गाजरसे मुरब्बा, अचार और जेली भी तैयार करते हैं। देशी गाजरका रङ्ग प्रायः कालापन लिये हुए लाल होता है और विदेशी गाजरका रङ्ग लालिमा लिये हुए पीला होता है।

दूमट, नरम और भुरभुरी मिट्टीमें इसकी भी खेती की जाती है। यदि खेतकी मिट्टीमें थोड़ा नोन हो, तब तो इसकी उपज और भी अच्छी होती है। इसके लिये पहले खेतको खूब जोत-कोड़कर मिट्टी पोली और बारीक कर लेते हैं। बीघा पीछे डेढ़-दो गाड़ी गोबरकी खाद और एक डेढ़ मन खलीकी खाद डालते हैं। खर-पात, गोशालाके बुहारन और कूड़े-कतवारकी खाद भी इसके लिये अच्छी होती है।

गाजरमें अधिक सिंचाईकी जरूरत नहीं पड़ती; क्योंकि भादोंसे लेकर कार्त्तिकके भीतर ही भीतर इसका बीज बोया जाता है। अंकुर निकल आनेके बाद बीच-बीचमें निरौनी करनी पड़ती है। इसके बीजके अंकुरित होनेमें १८-२० दिन लगते हैं। इसलिये एक पात्रमें पानी डालकर उसे धूपमें रख देते हैं। जब पानी गरम हो जाता है, तक कपड़ेकी एक पोटलीमें बीजोंको बाँधकर उसमें डुबा देते हैं। १०।१२ घण्टेतक भींगनेके बाद उसे निकालकर बीजोंको छाँहमें सुखाकर तब बोते हैं। ऐसा करनेसे एक सप्ताहमें अंकुर निकल आते हैं। धूल और



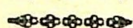
राखके साथ मिलाकर इसके बीज भूमिमें छींटते हैं। बीज बहुत घना छींटना ठीक नहीं है। देशी गाजरका बीज बीघा पीछे प्रायः डेढ़ सेर और विदेशी बीज कुल १०–१२ छटाँक लगता है।

भूमिमें बीज छींटनेके बाद यदि धूप बहुत तेज हो, तो उससे बचानेके लिये खटाई या खर डाल देना चाहिये। पौधोंके निकल आनेपर जमीनके रसको समझकर ८, १० या १५ दिन बाद पानी सींचना चाहिये। खेतसे घासोंकी सफाई करनेकी ओर भी ध्यान रखना जरूरी है। जो गाजर जमीनके ऊपर निकलें उन्हें फौरन मिट्टी भरकर ढँक देना चाहिये।

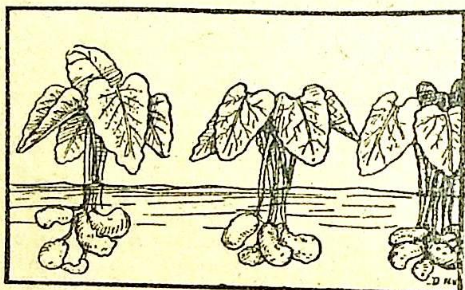
रसोई-घरों या कारखानोंकी चिमनियोंमें धुएँसे जो काजल पड़ता है, वह गाजरके लिये बहुत ही उपयोगी खाद है। यह कीड़ोंके उपद्रवसे पौधोंकी रक्षा करता है और पौधे बहुत स्वस्थ रहते हैं।

अरुई या कच्चू, कन्दा और मान

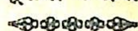
अरुई या कच्चू और कन्दा तथा मान—ये तीनों प्रायः एक ही प्रकारके मूलजातीय शाक हैं। अरुई छोटी होती है और कन्दा उससे बड़ा। पर कच्चू और कन्देको एक ही प्रकारका पौधा समझना ठीक नहीं। दोनोंके पत्ते दो प्रकारके होते हैं, पौधोंमें भी काफी भिन्नता होती है। अरुई या कच्चूके पत्तोंके डण्ठलका अलग शाक तैयार करते हैं। ये डण्ठल एक दम गल जाते हैं और शाक हलुआ-सा बन जाता है नमक



मसाले आदिसे इसका स्वाद अच्छा हो जाता है, कुछ मीठा भी लगता है। इन मूलज शाकोंमें लौह प्रचुर मात्रामें रहता



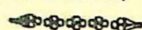
है। इससे रोगियोंके लिये ये उपादेय होते हैं। अर्श या बवासीरके बीमारोंको इनसे काफी फायदा पहुंचता है। मान या मानकच्चू भी इसी जातिका एक कन्द-विशेष है, पर यह अधिकतर बङ्गालमें ही होता है। अन्यत्र इसका प्रचलन नहीं है। बङ्गालमें मान या मान कच्चूकी खेती बहुत अच्छी होती है। एक-एक मान जाँघ बराबर मोटे और लम्बे होते हैं। इनके ऊपरके भागको लोग उबालकर चोखा या भरता बनाते हैं और नीचेके भागकी तरकारी बनती है। नीचेवाले भागको, शकरकन्दकी तरह कूट पीसकर आटा भी तैयार करते हैं। इस आटेका दूध और शक्करके साथ बहुत ही उत्तम खाद्य पदार्थ बनता है। यह बलवर्द्धक और सहजपाच्य होता है। यह कमजोर आदमियों या रोगियोंके लिये विशेष लाभदायक सिद्ध हो चुका है।



अरुई और कन्देकी खेती प्रायः एक ही प्रकारसे होती है। इनकी जमीन अपेक्षाकृत ऊँची और सुखी होनी चाहिये। गीली या सीलवाली जमीनमें उत्पन्न होनेपर फसल बहुत ही खराब और हानिकारक होती है। उसमें एक बड़ा भारी दोष आ जाता है। उसके खानेसे मुँह और कण्ठमें एक अजीब खुजलाहटसी पैदा होती है।

अरुई या कन्देका बीज नहीं होता। इनके अँखुओं और गाँठोंसे ही पौधे उत्पन्न होते हैं। अरुईके लिये जमीन दूमट और पोली होनी चाहिये। पर कन्दे या मानकी खेतीके लिये तो जमीनमें खूब ही गहरी जोत होनी चाहिये, ताकि उनको बढ़नेके लिये पूरा सुभीता मिले। बीघेमें दो-ढाई गाड़ी गोबरकी खाद पर्याप्त होती है।

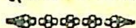
फागुन-चैतमें अरुई या कन्दोंका ऊपरी सिरा काटकर और पत्तोंको छाँटकर 'अंकुरदान' में बो देते हैं। इन अंकुर-दानोंको छज्जेके नीचे रखना चाहिये। १५-२० दिनोंमें वे सिरे अंकुरित हो उठते हैं। जब वे कुछ बड़े हो जायें तब यानी जेठ-असाढ़में एकाध बौछार पानी हो जानेपर खेतको फिरसे जोतकर बोना चाहिये। अरुईके पौधे बालिश्त डेढ़-बालिश्तकी दूरीपर बैठाये जाते हैं, कन्देके हाथ-हाथभर पर और मानके ४।५ हाथकी दूरीपर बैठाये जाते हैं। अरुई या कन्दा अगर बाहर निकल आवे, तो उसे मिट्टीसे और मानके ऊपर निकलनेपर राखसे ढँकते रहना चाहिये।



अरुई या कन्देकी फसल सालभरमें तैयार तो हो जाती है, पर यदि एक साल और छोड़ दें, तो कन्द और भी बड़ा तथा सरस हो जाता है। एक बीघेके लिये लगभग १०।१५ सेर अँखुवे या बीजका काम पड़ता है।

बीट या चुकन्दर

यह मूल या कन्द जातीय शाक है। इसमें चीनीकी मात्रा बहुत अधिक होती है। इससे चीनी तैयार भी की जाती है। देशमें इस समय बहुतेरे बड़े-बड़े व्यवसायियोंका ध्यान चीनीके कारबारकी ओर लगा हुआ है। सरकारने १५ वर्षोंके भारतीय चीनीके व्यापारको जो सुभीते दिये हैं। उनसे लाभ उठानेके लिये धड़ाधड़ देशके विविध भागोंमें चीनीकी मिलें खुल रही हैं। अभीतक चीनी तैयार करनेका प्रधान उपादान गन्ना ही माना जाता है। चीनीके कारबारके बढ़ते ही देशमें गन्नेकी खेती भी बहुत बढ़ गई है। परन्तु इस बढ़ी हुई खेतीसे भी चीनीकी मिलें पूरे ६ महीनोंतक भी काम नहीं कर पातीं। यदि मिल मालिकोंका ध्यान चीनी तैयार करने योग्य उद्भिजोंकी ओर आकर्षित हो, तो देशको और भी अधिक लाभ पहुँच सकता है। इन उद्भिजों में ताड़, खजूर और चुकन्दर आदि हैं। मिल-मालिक यदि रसायनज्ञों द्वारा जाँच करावें, तो हम समझते हैं कि महुएसे भी चीनी निकल सकती है। कमसे कम चुकन्दरसे चीनी तैयार करनेकी ओर तो उन्हें सबसे पहले ध्यान देना चाहिये, क्योंकि यदि विधिवत् खेती की जाय, तो गन्नेकी फसल तैयार

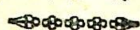


होनेके पहले ही इसकी फसल उन्हें मिल सकती है और वे मिल बन्द न रख कर चालू कर सकते हैं। यदि मिलवाले चुकन्दर लेने लगेंगे, तो इसमें सन्देह नहीं कि किसानोंको भी चुकन्दरकी खेतीसे अपेक्षाकृत अधिक लाभ होगा और यदि प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हुआ कि चुकन्दरकी खेती मूलीकी तरह बारहो मास की जा सकती है, तब तो फिर कहना ही क्या है। परन्तु यह काम अभी समय सापेक्ष्य है। अभी इसकी खपत अधिकांश तरकारीके लिये ही होती है। कुछ लोग कच्चा भी खाना पसन्द करते हैं। इसके शाकको स्वादिष्ट बनानेकी विधि यह है कि पहले इसे छिलका सहित उबाल लेना चाहिये। उबालनेके बाद छिलका उतारे और फिर उससे शाक तैयार करे, तो वह केवल लाभदायक ही नहीं, स्वादिष्ट भी होगा। उबालनेसे इसकी गन्ध कम हो जाती है।

हल्की, दूमट मिट्टी इसके लिए उपयुक्त होती है। खेतकी जोत अच्छी और गहरी होनी चाहिये। डेढ़ दो गाड़ी गोबरकी और सवा-डेढ़ मन खलीकी खाद एक बीघेमें डाली जाती है। जमीनमें खाद मिलानेके समय अगर दो-ढाई सेर सलफेट आफ अमोनिया* बीघे भरमें चूरा करके छींट दें तो चुकन्दर की फसल अच्छी होती है।

---

* सलफेट आफ अमोनिया नौसादरको कहते हैं और यह शहरोंके प्रायः सभी पंसारियोंके यहाँ मिलता है।



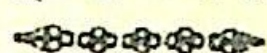
गाजरकी तरह चुकन्दरके बीजोंके अंकुरित होनेमें भी काफी समय लग जाता है। इसलिये इन बीजोंको भी धूपमें गर्म किये हुए जलमें १०।१२ घण्टेतक भिगो लेने और बादको छाँहमें सुखाकर बोनेसे शीघ्र ही पौधे उग आते हैं। पर इसके बीजोंको गाजरकी तरह खेतमें छींटते नहीं हैं; बल्कि अंकुरदानोंमें पौधे तैयार कर लेते हैं। अंकुरदानमें एक-एक या डेढ़-डेढ़ इञ्चकी दूरीपर चौथाई इञ्च गहराईमें बीज डालते हैं। जब पौधे २॥-३ इञ्च लम्बे हो जावें तो उन्हें सावधानीसे उखाड़ कर खेतमें बोनेकी विधि है। सावन-भादोंसे लेकर अगहन-पूसतक इसके बीज बोये जाते हैं।

खेतमें पौधे लग जायें, तो सप्ताहमें एक बार निरौनी करनी पड़ती है। आवश्यकतानुसार सिंचाई भी करनी पड़ती है और जो कन्द भूमिसे निकल आते हैं, उन्हें धूपसे बचानेके लिये आस-पासकी मिट्टी खोदकर उसीसे ढँक देते हैं। इससे जमीन पोली होती रहती है और कन्दको बढ़नेमें मदद मिलती है। इसके बढ़ने और पुष्ट होनेमें प्रायः डेढ़-दो महीनेका समय लगता है।

यूरोपियन, पारसी और यहूदी लोगोंमें इसकी खपत बहुत अधिक होती है। एक बीघेके लिये अच्छे बीज लगभग आधसेर तक लगते हैं।

शंखालू

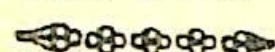
यह भी मूल या कन्द जातीय वनस्पति है। पर इसकी तरकारी नहीं बनती। इसे कच्चा ही खाते हैं। यह अधिकतर



बङ्गालमें और बिहारके भागलपुर, मुंगेर, दरभङ्गा आदि जिलोंमें होता है। यह खानेमें बड़ा ही मधुर होता है और लाभदायक भी। इसका छिलका काफी मोटा होता है। उसे उतार कर भीतरका गूदा खाया जाता है। यह दूधकी तरह श्वेत होता है। इसमें श्वेत-सार पर्याप्त मात्रामें रहता है, जिससे शरीरका पोषण होता है। देखनेमें इसका आकार बहुत कुछ शंखके ही समान होता है और शायद इसीलिये इसका नाम भी शंखालू रखा गया है।

मिट्टी इसकी भी हल्की और पोली होनी चाहिये। जोत-कोड़कर और ढेले तोड़कर मिट्टीको भुरभुरा कर लेते हैं। गोबरकी खाद १ गाड़ी और गोशालाके कूड़े-कतवारकी खाद एक गाड़ी एक बीघेके लिये काफी है। खाद सर्वत्र न डालकर दूसरे प्रकारसे भी उसका प्रयोग कर सकते हैं। सारे खेतको रस्सी और खूंटेके सहारे एक हाथ लम्बे और चौड़े वर्गोंमें बाँट लीजिये। जिस वर्गमें खाद डालिये उसकी बगल वाले चारों तरफके वर्गोंको छोड़ दीजिये। जिन चौकों या वर्गोंमें खाद डाली गयी है; केवल उन्हींमें बीज बोना चाहिये। खेतके वर्गीकरण, खाद-प्रयोग और बीज-वपनके कामोंको साफ समझनेके लिये नीचेके नक्शेको देखिये।

	१			२			३			४	



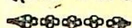
जिन वर्गोंमें या चौकोंमें नम्बर पड़े हैं, केवल उन्हींमें खादका प्रयोग कीजिये और उन्हींमें बीज बोइये। नक्शा केवल विषयको साफ समझानेके विचारसे दिया गया है। इसी प्रकार आप अपने सुभीतेके अनुसार काम कीजिये।

हरएक चौकेमें दो या तीन बीज* डालिये। जब पौधे अंकुरित हो आवें, तब उनमें जो अधिक सजीव पड़े उसे रखकर बाकीको उखाड़ फेंकिये। हाँ जिन चौकोंमें बीज बोये जायें, उनकी मिट्टी डेढ़ हाथतक पोली की गई होनी चाहिये। जेठसे आश्विन-तक बीज बोनेका समय है। वर्षाकी कमी हो और भूमिमें रसका अभाव जान पड़े तो सिचाई भी करनी पड़ती है। इसकी लताको बहुत दूरतक फैलने देना नहीं चाहिये। लताके फैलनेसे जड़की पुष्टि कम होती है। और जड़ पुष्ट हुए बिना शंखालूकी गांठे नहीं जमतीं। इसलिये जड़से डेढ़ दो हाथ छोड़कर बाकी अंशको समय-समयपर छांटते रहना चाहिये। ५-६ महीनेमें इसकी फसल तैयार हो जाती है।

ओल

यदि विधिवत् खेती की जाये, तो ओल बहुत ही उपादेय वनस्पति साबित होता है; परन्तु जो ओल अपने आप सील-वाली या गीली धरतीमें पैदा होता है, वह बड़ा ही खतरनाक

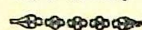
* याद रखिये, शंखालूके बीज बड़े जहरीले होते हैं। इसे हिफा-जतसे बक्समें बन्द रखिये और ऐसी जगह न छोड़िये कि छोटे बच्चे खानेकी चीज समझ कर मुँहमें न डाल लें।



होता है। ऐसे दूषित ओलका खाना तो दूर रहा, शरीरमें अगर उसका रस भी लग जाता है तो एक तेज खुजलाहट-सी पैदा हो जाती है। सिंहल और मलाका टापुओंसे यह भारतवर्षमें आया बताया जाता है। बम्बई, मद्रास और मैसूर आदि स्थानों-में बहुत अच्छा ओल मिलता है। सूखी, ऊँची और क्षार-प्रधान भूमिमें उपजनेवाला ओल ही अच्छा होता है। इसे लोग तरह-तरहसे खाते हैं। इसकी तरकारी बनती है, चोखा बनता है और अचार तो बहुत ही अच्छा होता है। बवासीरके रोगियोंके लिये इसका चोखा बहुत ही फायदेमन्द समझा जाता है। इसमें लोहकी मात्रा अधिक रहती है।

ओलकी खेती करनेके लिये उपयुक्त जमीनका होना आव-श्यक है। दूमट और पोला मिट्टीमें अच्छी फसल होती है। इसके खेतमें राखकी खाद, जली हुई मिट्टी और सड़े हुए गोबरकी सूखी खाद अच्छी होती है। शंखालूकी तरह खेतमें इसके भी अगर चौके बना लिये जायें तो बहुत सुभीता होता है। पर उसकी तरह इसमें लताके फैलनेकी जगह नहीं छोड़नी पड़ती; क्योंकि इसका पौधा खड़ा होता है। हाँ, डेढ़ या दो हाथकी दूरीपर इसकी गांठें लगायी जायें, उनकी मिट्टी हाथ डेढ़ हाथ गहरेतक पोली होनी जरूरी है।

ओलका बीज नहीं होता। एक बड़े ओलके शरीरपर बहुतेरी छोटी-मोटी गांठें होती हैं। इन गाँठोंसे पहले अंकुरदानोंमें पौधे तैयार कर लेते हैं और जब वे कुछ बड़े हो जाते हैं, तब उन्हें

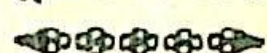


खुले खेतमें बैठाते हैं। ओलके खेतमें स्वच्छ धूपका लगना आवश्यक है। माघ-फागुनमें इसकी गांठें बैठायी जाती हैं। वर्षाकी कमीके समय कभी-कभी पानी पटाना पड़ता है।

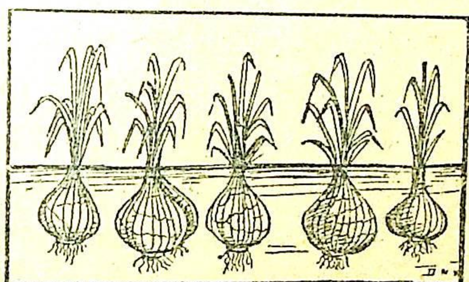
ओलके तैयार होनेमें कम-से-कम एक वर्षका समय लगता है। पर यदि दो-ढाई वर्षतक जमीनमें छोड़ दें, तो उनका आकार और भी बड़ा होता है और वे अधिक सुस्वादु होते हैं। इस बीचमें समय-समयपर सोहनी या निरौनी करनेकी भी जरूरत पड़ती है। इस बातपर भी ध्यान रखना आवश्यक है कि बरसातमें इसकी जड़में पानी जमने न पाये। इसके लिये जड़ोंकी मिट्टी भरकर ऊँचा कर देना अच्छा है। ओल एक ऐसा शाक है कि इसे धूपमें सुखाकर रख देनेपर यह बहुत दिनोंतक अविकृत रूपमें रहता है। धूपमें न सुखाकर रसोई-घरमें यदि छीकेमें लटकाकर रख दें, तो यह महीनोंतक ज्यों-का-त्यों तरोताजा बना रहता है—न सड़ता है, न सूखता।

प्याज

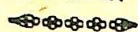
प्याज मूलजातीय उद्भिद है। इसे शाक तो कहते ही हैं, मसाला भी कहते हैं। इसकी गन्ध बड़ी तेज और तीखी होती है। हमारे यहाँ यह निषिद्ध और अखाद्य माना जाता है। बहुतेरे लोग तो इसकी गन्धसे ही घबराते हैं, पर जो लोग प्याज खाते हैं, इसकी गन्धसे ही उनकी क्षुधा मानों उद्दीप्त हो उठती है। जो लोग मांसाहारी हैं, वे इसका प्रयोग अधिक करते हैं और बिना प्याजके मांसको फीका और



विस्वाद समझते हैं। वे तो इसे हरएक तरकारी और शाकमें डालकर खाना पसन्द करते हैं। निरामिषभोजी लोग प्राय: इसको खाद्यरूपमें काममें नहीं लाते। यह तो हुई रुचि और संस्कारकी बात। पर गुणागुणके विचारसे प्याज कुछ लोगोंके लिये विशेष लाभदायक और कुछ लोगोंके लिए कम लाभदायक सिद्ध होता है। संस्कृतमें इसे पलाण्डु कहते हैं। अपने

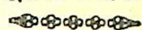


यहाँके आयुर्वेद ग्रन्थोंमें प्याजकी गुणावली बड़े अच्छे ढङ्गसे वर्णित है। उनके मतानुसार प्याज शुक्रवर्द्धक और अग्निदीपक है। एक प्याजका रस शहदके साथ मिलाकर यदि कुछ दिनोंतक नित्य नियमित रूपसे प्रात: काल सेवन करे, तो कहते हैं पुरुषत्व-हीनता दूर हो जाती है। प्लीहाके रोगियोंको भी आगमें पकाकर और उसे रातभर ओसमें रखकर एक प्याज प्रात:काल सेवन कराया जाता है। कुछ अनुभवी वैद्य तो यहाँतक कहते हैं कि प्याजको गीली मिट्टीसे लपेटकर भूसीकी आग में पकाकर यदि एक मासतक जलोदरके रोगीको नियम-


पूर्वक सेवन कराया जाये, तो रोग बहुत कुछ उपशमित होता है।

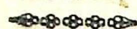
अस्तु। भले ही यह खाद्य रूपमें व्यवहृत होनेके लिये समाज-विशेषमें निषिद्ध माना जाता हो; परन्तु इसका प्रयोग दिन-दिन बढ़ता जा रहा है और इसकी खेती काफी लाभदायक भी सिद्ध होती है। कट्ठेमें ४।५ मनसे भी अधिक इसकी फसल होती है।

इसके लिये मिट्टी दूमट (बलुगर) अच्छी होती है। प्याजके खेतमें धूप हवाका समावेश भलीभाँति होना चाहिये। जिन खेतोंमें आस-पासके पेड़ोंकी छाया पड़ती है और जमीन ढँकी रहती है, प्याजकी खेतीके उपयुक्त नहीं है। बरसातसे ही इसके लिये खेत तैयार करना चाहिये। ४।५ बार भली भाँति खेतको जुतवा लेना उचित है। मिट्टी खूब नरम और भुरभुरी कर ली जाती है। बीघा पीछे दो-ढाई मन पुराने गोबरकी खाद और मनभर खर-पात या लकड़ीकी राखकी जरूरत पड़ती है। तीन भाग खाद तो पहले ही जमीनमें डालकर मिट्टीके साथ मिला देनी चाहिये और एक भाग खाद आवश्यकतानुसार समय-समयपर पौधोंकी जड़में डालनेके लिए तैयार रखनी चाहिये। एक काम और आवश्यक है। प्याजके खेतके एक कोनेमें एक गड्ढा गर्मियोंमें ही खोद रखे। इसे धूल, मिट्टी, राख आदिसे भर दे और पानी भी काफी छोड़ दे। इसे हमेशा तर रखे ताकि सब चीजें खूब सड़ती रहें।



खेतमें खाद डालनेके समय इस गड्ढेमें तैयार खादको भी निकालकर खेतकी मिट्टीमें मिला दे और अब गड्ढेको बराबर कर दे।

बरसातका अन्त होते ही अंकुरदानोंमें प्याजके बीज बोये जाते हैं। बीजोंको योंही न छींट कर एक एक या डेढ़-डेढ़ इञ्चकी दूरीपर बोना अच्छा है। इससे अंकुरित होनेपर पौधों-को स्थानान्तरित करनेमें सुभीता होता है। जब अंकुर ५-६ अंगुलके हो जाने, तब उन्हें उठाकर खेतमें बोते हैं। बोनेके पहले खेतको क्यारियोंमें बाँट रखना चाहिये। हरएक क्यारीमें हाथ-हाथ भरकी दूरीपर लम्बी लकीरें रस्सी और खूंटेकी मददसे, खींच लेनेसे पौधोंके लगानेमें सुभीता होती है और खेत भी देखनेमें अच्छा मालूम होता है। इन लकीरोंपर पौन पौन या एक-एक बालिश्तकी दूरीपर पौधे बैठाते जाइये। बादको आलूकी तरह इनकी जड़में भी मिट्टी भरकर मेंड़ बना ली जाती हैं। पर आलूकी तरह इनकी मेंड़ें मोटा बनानेकी जरूरत नहीं। हाँ, दो मेंड़ोंके बीचमें सिंचाईके लिये नाली रखना आवश्यक है। भूमिके रसको समझकर हफ्तेमें एक या दो बार पानी पटाना पड़ता है। प्याजकी जड़में पानीका बैठना अच्छा नहीं है। इससे प्याजकी गाँठ सड़ जाती है। ज्यों-ज्यों प्याजका आकार बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों उनकी जड़ोंमें मिट्टी भरते जाते हैं। प्याजके तैयार होनेमें प्रायः ६ मासका समय लगता है।



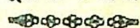
पर कुछ लोग पहले प्याजके पौधोंको खेतमें ४-४ अंगुल पर ही बोते हैं और जब वे कुछ बड़े हो जाते हैं, तब हर दोके बीचसे एक प्याज उखाड़ते और बेचना शुरू कर देते हैं। नयी फसल होनेके कारण उन्हें अगहन-पूसके महीनोंमें पौधे सहित प्याजका दाम भी काफी मिल जाता है। इस कोमल पौधे और प्याजका लोग शाक बनानेके काममें लाते हैं। बाकीकी फसल पकनेपर उखाड़ते हैं। इस प्रकार दुहरा लाभ उठाया जा सकता है।

प्याजकी जड़ोंमें मिट्टी भरते समय वह खाद भी मिलाते जाइये, जो आपने रख छोड़ा है। इससे पौधेकी पुष्टिमें काफी मदद पहुंचेगी।

कभी-कभी प्याजकी पत्तियाँ पीली होने लगती हैं और उनका हरापन मिट जाता है। इसका कोई कारण नहीं जान पड़ता। पर पौधोंके इस प्रकार मुर्दार हो जानेसे फसल खराब होती है। ऐसी हालतमें हरएक पौधेपर थोड़ी-थोड़ी राख डाल देनेसे उनमें फिर नया जीवनसा आने लगता है।

फसल तैयार हो जानेपर (यानी फागुनसे जेठतक) उन्हें पहले धूपमें सुखा लेना चाहिये और तब मचानोंपर रखना चाहिये। ऐसा करनेसे वे सड़ते नहीं और काफी दिन तक रहते हैं। जब दाम अच्छा मिले, तब बेचना चाहिये।

अंकुरदानों या चौकोंमें यदि हम अपनी आवश्यकतासे अधिक चारे या पौधे तैयार कर लें, तो उन्हें आस-पासके किसान



भाई खरीद सकते हैं। प्याजके इन तैयार किये हुए पौधोंका दाम काफी मिल जाता है।

एक वर्षका पुराना प्याज बोकर आप उससे बीज भी तैयार कर सकते हैं। अगहन या पूसमें जो गाँठ बोयी जाती है, उसमें चैत-बैसाखमें बीज तैयार होता है। ये बीज पौधेके सिरेपर छत्ते-की तरफसे लगते हैं। बीज जब खूब पक जाय तब उन्हें छत्ते सहित खेतसे लाकर सुखा लेना चाहिये। बादको झाड़कर बीजों-को अलग कर बोतल या हाँड़ीमें बन्द कर रखना चाहिये। इस बोतल या हाँड़ीको यदि भूसी या अनाजसे भरी कोठीके अन्दर छिपा रखें, तो बीज बहुत पुष्ट और स्वस्थ रहते हैं। उनसे जो पौधे उगाये जाते हैं, वे बड़े तेज और जानदार होते हैं।

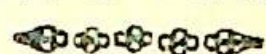


तीसरी क्यारी

फलजातीय साग-सब्जी

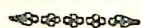
टमाटर

जबसे वैज्ञानिकोंने यह प्रमाणित किया है कि टमाटरमें उत्तम कोटिका विटामिन रहता है, तबसे इसकी माँग सारी दुनियामें बहुत बढ़ गयी है। कहा जाता है, पहले यह अमेरिकाके जङ्गलोंमें आप ही उपजता और सूख जाता था। कुछ प्रकृति-प्रेमी लोग इसके सुन्दर फलोंको देखकर मुग्ध हुए और इनके पौधे जङ्गलसे लाकर अपनी वाटिकामें, केवल शोभा बढ़ानेके लिये लगाने लगे। वास्तवमें इसके खूब पके हुए लाल-लाल फल हरी डालियोंमें बड़े ही सुन्दर और आकर्षक जँचते हैं। इसके पके फलोंको पक्षी बड़े प्रेमसे खाते हैं। यह देखकर कुछ लोगोंने भी इसे खाना शुरू किया। इस प्रकार धीरे-धीरे इसकी खेती होने लगी। भारतवर्षमें अभी कोई ८-१० वर्षोंके अन्दर इसका प्रचलन बढ़ा है। टमाटर होता तो पहले भी था; पर लोग इसकी विशेष कदर नहीं करते थे और न इसके गुणा-गुणका ही विशेष परिचय करते थे। भारतकी अपेक्षा यूरोपमें इसकी कदर अब भी बहुत अधिक है। वहाँ इसका दाम भी काफी मिलता है।



यों तो लोग इसके कच्चे फलोंसे चटनी और खटाई या खट-मीठी बनाते हैं और पके हुए लाल फलोंको भी तरकारीमें डालकर उसे स्वादिष्ट बनाते हैं। पर इसके सेवनकी वैज्ञानिक रीति यह है कि खूब पके और ताजे फल यों ही खाये जायें। अग्नि-संयोग होनेपर इनका सार भाग बहुत कुछ नष्ट हो जाता है। यदि यों ही न खाये जायें, तो शक्करकी चासनी तैयार करके उसमें इन फलोंको आधो आध फाड़कर डाल दे। इस प्रकार तैयार होनेवाला टमाटरका मुरब्बा जैसा ही सुस्वादु होता है, वैसा ही लाभदायक। टमाटरके पके फलों-के सेवनमें कई रोग अच्छे होते हैं। साधारण बेरीबेरीके रोगियोंको प्रतिदिन यदि २-४ पके फल योंही (बिना सिझाये) खानेको दिये जायें तो महीने भरमें उनका रोग बिना किसी अन्य औषधिके भी आराम हो जाता है। छोटे बच्चोंके सुखण्डी रोग। (रेकेटिग) के लिये भी पके फलोंका रस बड़ा ही लाभ-दायक सिद्ध होता है। जिन दुधमुँहे बच्चोंका लीवर खराब हो जाता है यानी जिनको यकृत-दोष होता है, उनको प्रतिदिन यदि पके टमाटरका रस एक चम्मच भर खिलाया जाये, तो बहुत शीघ्र उनकी पाचन-क्रिया ठीक हो जाती है। टमाटर भोजनकी रुचि बढ़ाता है।

इसकी खेती भारतके प्रायः सभी भागोंमें हो सकती है। दूमट, हल्की और सरस मिट्टीमें इसकी फसल अच्छी होती है। साधारणतः बरसातमें और बरसातके बाद शरद् ऋतुमें



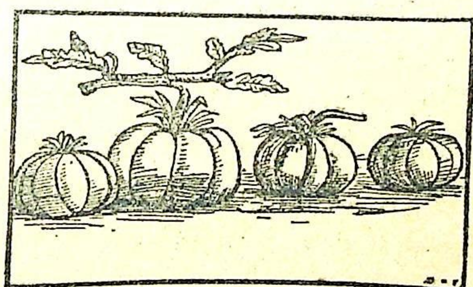
इसकी खेती शुरू की जाती है। टमाटरके खेतमें भेंड़े बैठाना*
बहुत ही अच्छा है। भेड़-बकरियोंकी लेंड़ीकी खाद और पुराने
गोबरकी खाद टमाटरके उपयुक्त है। टमाटरका पौधा भूमिमें
बहुत अधिक सरस पदार्थोंको खींचता है। इसलिये इसके
खेतमें जितना ही अधिक खाद दी जाये, उतनी ही अच्छी
फसल होती है। साधारणतः बीघेमें २।३ गाड़ी गोबरकी खाद,
एक गाड़ी भेंड़-बकरियोंकी लेंड़ी और आठ-दस टोकरी गोशाला-
के कूड़े कतवारकी खादें और ४।६ टोकरी लकड़ीकी राख डालते
हैं। इसकी जमीन सरस होनी चाहिये, पर सीलवाली नहीं।
खादको मिट्टीके साथ भली-भाँति मिला देना चाहिये।

खेतमें बोनेके पहले इसके पौधे अंकुरदानोंमें तैयार कर
लिये जाते हैं। एक बीघेके लिये ढाई तीन तोलेतक बीज
बोनेकी जरूरत पड़ती है। जब पौधे ६।७ इञ्चके हो जायें, तब
उन्हें खेतमें बैठाना चाहिये। खेतकी मिट्टी तैयार कर लेनेके
बाद उसमें धारियाँ बना लेनी चाहिये। इन धारियोंमें दो-दो
हाथकी दूरीपर एक-एक पौधा बैठाना चाहिये। टमाटरका
पौधा जमीनपर खड़ा नहीं रहता और न सेम कद्दू आदिकी
तरह इसकी लता आधार पकड़ कर बहुत ऊपर ही चढ़

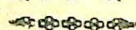
* भेंड़े बैठानेकी चाल भारतमें बहुत दिनोंसे प्रचलित है। जब
खेतमें कोई फसल नहीं रहती, तब घास चरनेके लिये उसमें भेंड़
बैठाते हैं—यानी भेंड़-बकरियाँ घास तो चरती ही हैं, मल-मूत्र भी
त्याग करती हैं, जिससे खेतकी उपज बढ़ती है। भेंड़ बैठानेका मूल
उद्देश्य यही है।



सकती है। हाँ, जमीनपर भलीभाँति फैल सकती है। पर जमीन-पर फैलनेसे पौधेके सब अङ्गोंमें पूरी धूप और हवा नहीं लगने पाती और जमीनमें सील उत्पन्न हो सकती है। इस कारण जमीनपर फैलनेवाले टमाटरके पौधेमें फसल अच्छी नहीं होती। अतएव इसकी खेतीके लिये अच्छी प्रणाली यह है कि जमीनसे १०-१२ इञ्च ऊँचे छोटे-छोटे मचान बना दिये जायें। एक-एक मचानपर दो-दो या चार-चार पौधोंको फैलने और फलने देना चाहिये। कुछ लोग मचान न बाँधकर

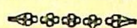


हरएक पौधेके पास बाँसकी फट्टियाँ या अरहरकी सूखी झाँड़ियाँ (रहेठे जिनमें पर्याप्त शाखाएं होती हैं) गाड़ देते हैं। पर इन आधारोंपर भी टमाटरके पौधे अपने आप नहीं चढ़ सकते। उन्हें चढ़ाकर हल्के बन्धनोंसे अटका देना पड़ता है। टमाटरके पौधेकी जड़के पाससे प्रायः कुछ डालियां निकली हैं। इनमें फल बहुत हो कम होते हैं। अतः इन डालियोंको काटकर अलग करते रहना चाहिये। इन्हें काट देनेपर पौधा अधिक जानदार


हो जाता है। कुछ बड़ा होनेपर पौधेका सिरा छाँट देना अच्छा है। इससे पौधेमें ऊपरके भागसे अपेक्षाकृत अधिक शाखाएँ निकल आती हैं और फल भी बाकी लगते हैं। जमीनका रस समझकर सप्ताहमें या पक्षमें एक बार सिंचाई करनी चाहिये। आवश्यकतानुसार टमाटरके खेतमें सोहनी भी करनी पड़ती है।

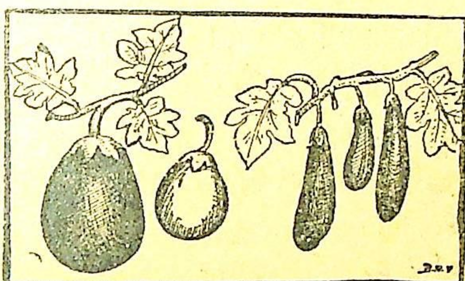
टमाटरके पौधोंके भारी दुश्मन कीड़े हैं। कीड़ोंका उपद्रव घटानेके लिये जो उपाय अन्यत्र बताये गये हैं उनका अनुसरण करना चाहिये। जो कीड़े पत्ते चाटते हैं और उड़ सकते हैं और जो सहज ही दिखाई देते हैं, उनसे छुटकारा पाना तो आसान है; पर जो बहुत ही छोटे कीड़े हैं, वे पौधोंके कोमल पल्लवोंमें घर कर लेते हैं। इससे पौधोंमें सिकुड़न आती है और वे धीरे-धीरे नष्ट हो जाते हैं। ज्योंही पौधोंमें यह रोग दिखाई दे, त्योंही उस सिकुड़े हुये पत्ते या सिकुड़ी हुई डालोंको तोड़कर खेतसे अलग ले जाकर जला डालना चाहिये। इसमें शीघ्रता नहीं करनेसे कीड़े संक्रामक रोगकी तरह सब पौधों-पर धावा बोल देते हैं। याद रखिये, एक पौधेका मोह करनेसे सब पौधोंसे हाथ धो बैठना पड़ता है। इसलिये इस विषयमें सदा सतर्क रहना चाहिये।

टमाटरकी फसल तैयार होनेमें ढाई-तीन महीनेका समय लगता है। यदि आपकी बिक्रीके लिये टमाटर दूरस्थ बाजार को चालान करना पड़ता हो, तो ज्योंही फलोंपर लाली दौड़े



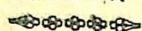
त्योंही चुन-चुनकर उन्हें तोड़ते और चालान करते जाइये। एकदम पके फलोंको चालान करनेसे अधिकांश फल रास्तेमें ही खराब हो जाते हैं।

बैंगन या भंटा



भंटा या बैंगन भारतका मौलिक शाक है। इसे संस्कृतिमें वार्त्ताकु कहते हैं। आयुर्वेद ग्रन्थोंमें इसके गुणागुणका विशद विवेचन मिलता है। बैंगन या भण्टेकी जातीगत विभिन्नता बहुत है। बारहमासे भण्टेकी आयुर्वेदमें बड़ी प्रशंसा की गई है और उसे वायु-कफ-पित्त इन तीनों दोषोंको शान्त करनेवाला बताया गया है। सभी श्रेणियाँ और समाजोंके भारतवासी इसका शाक बनाते और खाते हैं। हाँ; कुछ थोड़ेसे ऐसे लोग हैं, जो इसके आकारगत दोषसे घिनाते और नहीं खाते हैं। उनका कहना है कि बैंगनोंको आगमें पकानेपर ऐसा जान पड़ता है, मानों मरा हुआ चूहा हो। परन्तु यह सम्पूर्णतः व्यक्तिगत भ्रान्त धारणा या कुसंस्कारपूर्ण बात है।

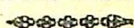
कुछ बैंगन बहुत बड़े आकारके होते हैं और उनका चोखा



या भरता बहुत ही स्वादिष्ट बनता है, कुछ बैंगन अधिक मोटे तो नहीं, पर लम्बे बहुत होते हैं और कुछ बैंगन सफेद और मझोले आकारके होते हैं। बैंगनका रङ्ग साधारणतः कैसा होता है, यह बतानेकी जरूरत नहीं, क्योंकि बैंगनके रङ्गके अनुसार ही उस रङ्गका नामकरण हुआ है।

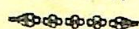
बैंगनकी खेती वर्षमें प्रायः सर्वत्र तीन बार की जाती है और यदि इनके पौधोंको नष्ट नहीं करें तो वे आगामी वर्ष भी फल दे सकते हैं। पर दूसरे वर्षकी फसल पहले वर्षकी तरह अच्छी नहीं होती। फल तो कुछ खराब होते ही हैं स्वाद भी वैसा मधुर नहीं होता। इसलिये प्रतिवर्ष नये सिरेसे खेती करनी ही उचित है। वैसाख जेठमें जो बीज बोये जाते हैं, उनका फल भादोंमें मिलना शुरू होता है। जो बीज भादों और आश्विनमें बोते हैं, उनका फल अगहन पूसमें और फिर अगहन पूसमें जो बीज बोते, उनका फल चैतसे मिलना शुरू होता है।

पर जो बात अगहन पूसवाले बैंगनोंमें होती है वह औरोंमें नहीं होती। अगहन-पूसमें फलनेवाले बैंगन सब प्रकारकी हानियोंसे वर्जित और सुस्वादु होते हैं। उनमें एक ऐसी कोमलता रहती है, जो औरोंमें नहीं। बैंगनके सभी पौधे प्रायः दो बार फलते हैं। पहली बारका फलना खतम होनेपर पौधोंको छाँट देना चाहिये और उनकी जड़ोंमें फिरसे खाद और मिट्टी भरकर खूब पानी पटा देना चाहिये।



खेतमें इसके बीज नहीं बोये जाते, पौधे ही लगाये जाते हैं और पौधोंको अंकुरदानोंमें तैयार कर लेना पड़ता है। एक बीघेके लिये ढाई-तीन तोले बीज पर्याप्त हैं। अंकुरदानकी मिट्टी खूब भुरभुरी होनी चाहिये—एकदम धूलिके समान। अंकुरदानमें बीजोंको छींटकर ऊपरसे और भी मिट्टी भुरभुरा देनी चाहिये, ताकि बीज भलीभांति ढँक जायं और उनके ऊपर चौथाई इञ्च मोटी मिट्टीकी एक और तह पड़ जाये। आवश्यकतानुसार इसमें पानी सींचना चाहिये। जब पौधे डेढ़-दो इञ्चके हो जायें, तब उन्हें चार-चार अंगुलकी दूरीपर बड़े अंकुरदानोंमें बैठाइये। पर यह काम करते समय पहले पौधोंको भली भांति पानीमें धो लेना चाहिये और धोनेके बाद लगभग आधे घण्टेतक तूतियाके घोलमें पौधोंकी जड़ोंको डुबाये रखना चाहिये। एक बाल्टी पानीके लिये तोलाभर तूतिया काफी है। जड़ोंको तूतियाके घोलमें डुबानेसे आगे चलकर जो फल होंगे, उनमें कीड़े नहीं होने पावेंगे।

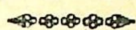
जिस समय इधर बीजसे पौधे तैयार होते रहें उसी समय उन्हें बोनेके लिये खेतको भली भांति जोत-कोड़कर तैयार करते रहना चाहिये। दो-तीन बार जोतनेके बाद खेतकी मिट्टीके साथ खाद मिलानी चाहिये। बीघेमें १ से २ गाड़ीतक गोबर ४ से ६ मनतक कण्डे या उपलेकी राख ५-६ सेर नौसादर और ४-५ मनतक खलीकी खाद बैंगनके खेतमें दी जानी चाहिये। नौसादरका चूरा जमीन तैयार करनेके बहुत पहले ही, कमसे कम दो मास



पहले छींट देना चाहिये। ऐसा करनेसे पौधा लगानेके समयतक वह मिट्टीके साथ मिलकर 'समरस' हो जाता है। पौधा लगानेके पहले फिर एक बार जमीनको जोत-कोड़ लेना चाहिये। ऊपर खादकी जो मात्रा बतायी गयी है उसमेंसे मनभर खलीकी खाद और कुछ राख बचाकर रख देनी चाहिये। जब पौधोंको जरूरत पड़ती है तब उनकी जड़ोंमें वह खाद दी जाती है।

बैंगनकी खेतीके लिये जमीनकी पहचान होनी जरूरी है, क्योंकि इसमें यदि खाद अधिक मात्रामें पड़ जायगी, तो पौधे खूब लहलहा उठेंगे, मगर फल कम होंगे और यदि खाद कम हो गयी; तब न पौधे अच्छे होंगे न फल। इसलिये खेतका चुनाव पहले ही कर लेना चाहिये। खेतकी मजबूती और कमजोरीका हाल आस-पासके किसान भाइयोंसे पूछनेपर ही मालूम हो जाता है। जो हो, पहले कुछ कम खाद डालकर पौधोंका रुख देखकर बीच-बीचमें थोड़ी-थोड़ी खाद डाली जाये, तो परिणाम अच्छा होता है।

बड़े अंकुरदानोंमें जब पौधोंमें ५-५ या ६-६ पत्तियाँ निकल आवें तब उन्हें खेतमें खिंची हुई लकीरोंपर दो-ढाई हाथके अन्तरसे बोते जाइये। बोते समय यदि उनकी जड़ोंमें थोड़ी-थोड़ी जली हुई मिट्टीका (आवें या ईंटके पिजावेकी पकी हुई मिट्टी) चूरा छोड़ते जायें तो अच्छा है। नये लगाये हुए पौधोंको शुरू-शुरूमें सप्ताहमें दो बार थोड़ा सींचना पड़ता है। साथ ही नये पौधोंको तेज धूपसे बचानेकी भी कुछ व्यवस्था



करनी पड़ती है। ताड़, खजूर, नारियलके पत्ते और चटाइयोंसे यह काम लिया जा सकता है।

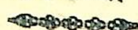
हाँ, खेतमें रोपनेके पहले यदि पौधोंकी जड़ोंको थोड़ा-थोड़ा छाँट लें और तूतियाके घोलमें आध घण्टेतक भिगों लें तो अच्छा है। ऐसा करनेसे एक तो कीड़े कम लगते हैं और दूसरे फल अधिक देते हैं। जब पौधे खेतकी जमीन पकड़ लें और डालियाँ देने लगें, तब उन डालियोंको छाँट देनेसे पेड़ मजबूत और अधिक फल देनेवाले बन जाते हैं। जबतक पौधे खेतमें जड़ नहीं फैलाते, तबतक इन्हें सूर्यास्तके समय पिचकारियोंसे नहला देना अच्छा है।

कीड़ोंका उपद्रव होनेपर जो उपाय और-और पौधोंके लिये बताये गये हैं, उन्हींका अनुसरण करना चाहिये।

बैगन तीन-चार महीनेमें फलने लगता है और प्रायः तीन चार महीनोंतक लगातार इसके फल मिलते रहते हैं। खेती अच्छी होनेपर एक-एक पौधोंसे दो-दो सौसे भी अधिक फल मिल सकते हैं।

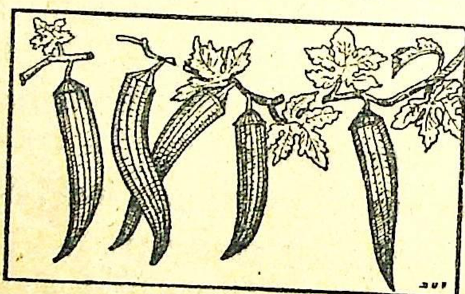
भिंड़ी या रामतरोई

गर्मीके दिनोंमें जब और-और साग-सब्जियाँ कम मिलती हैं, तब भिंडी बहुतायतसे मिलती है। इसका शाक अच्छा है, पर कोमल अवस्थामें ही। कड़ी और पुष्ट हो जानेपर इसकी फलियोंका शाक अच्छा नहीं बनता। भिंडी शरीरको शीतल रखती है और बलवीर्य-वर्द्धक होती है। कुछ लोग इसके



कोमल फलोंको कच्चा भी खाना लाभदायक बताते हैं। भिण्डीका नियमित रूपसे सेवन करनेपर पित्त शान्त रहता है।

यह तो हुई शाक-रूपमें व्यवहृत होनेकी बात। अब भिंडी-की एक दूसरी उपयोगिता भी हम बताना चाहते हैं, जो बहुत ही कम लोगोंको अबतक मालूम है। भिंडीके पौधोंसे पाट या जूटकी तरहके बहुत ही चमकदार और सूक्ष्म रेशे निकलते हैं।



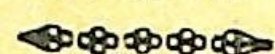
इन रेशोंसे धागा बनता और उससे कपड़ा तैयार होता है। यह कपड़ा सिल्ककी तरह मुलायम, चमकीला और मजबूत होता है। तरकारीकी अपेक्षा यदि इस नये कामके लिये भिंडीकी खेतीकी जाये, तो वह किसानोंके लिये बहुत अधिक लाभप्रद सिद्ध होगी हाँ इसके लिये आवश्यकता इस बातकी है कि देशकी कपड़ेकी मिलें, इन रेशोंको अधिकाधिक उपयोगमें लावें। इनका प्रयोग कराके देखें और प्रचलन बढ़ावें।

अस्तु। पहले हम तरकारी या शाकके लिये इसकी खेती करनेकी विधि बताना चाहते हैं क्योंकि यही पुस्तकका प्रधान

[illegible] है। [illegible] मिट्टी इसके अनुकूल होती है। [illegible] अच्छे होने चाहिये। [illegible] [illegible] खाद डाली जाती है। [illegible] पत्तोंकी राख भी डाली जाये, तो अच्छा है। खेतको जोत-कोड़ और खाद डालकर बराबर करनेके बाद [illegible] इसमें लम्बी खड़ी और आड़ी रेखाएँ खींच देते हैं। जहाँ-जहाँ ये रेखाएँ आपसमें काटती हैं, वहाँ-वहाँ इसके बीज बोये जाते हैं अथवा पौधे लगाये जाते हैं। इसकी खेती दोनों प्रकारसे हो सकती है—बीज एकबारगी खेतमें बोकर या अंकुरशालामें पौधे तैयार करके खेतमें लगाकर।

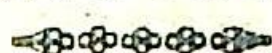
इसके बीज माघ-फागुनसे शुरू करके जेठ असाढ़तक बोये जाते हैं। जो बीज माघ फागुनमें बोते हैं उनके पौधे कुछ छोटे होते हैं, और फल खूब अधिक लगते हैं। पर ये पौधे अधिक दिनोंतक टिकते नहीं हैं। चैतमें जो बीज बोये जाते हैं वे बहुत शीघ्र तो फलते ही हैं, साथ ही बहुत समयतक फलते रहते हैं। बीघेमें सेर-डेढ़ सेरतक बीज लगते हैं।

पौधोंके उग आनेपर या अंकुरशालासे लाकर खेतमें लगा देनेपर ज़मीनका रस समझकर सिंचाई करनी पड़ती है। आवश्यकतानुसार महीनेमें दो या एक बार सोहनी या निरोनी करनी चाहिये। घास-पात साफ होनेके अलावा ज़मीनकी मिट्टी भी इससे उलट-पुलट कर दुरुस्त होती रहती है।



भिंडीके पौधे साधारणतः दो प्रकारके होते हैं। कुछ तो डेढ़ दो हाथतक ऊँचे होकर ही समाप्त हो जाते हैं और कुछकी लम्बाई तीन-चार हाथतक पहुँच जाती है। जो लोग रेशे बेचनेके लिये इसकी खेती करें, उन्हें उचित है कि लम्बे पौधे वाली भिंडीके ही बीज बोयें। बीघेमें लगभग ६ सेर बीज लगेंगे। इस कामके लिये न तो अँकुरदानमें चारे या पौधे तैयार करनेकी जरूरत है और न खेतमें डेढ़ डेढ़ हाथपर लकीरें खींचनेकी। खाद डालकर खेत तैयार करनेके बाद ही खूब घने बीज बो देने चाहिये। इससे कई लाभ हैं। जितने घने पौधे होंगे, उतनी ही उनमें डालियाँ कम होंगी और डालियोंके कम होनेसे रेशे भी अच्छे और काफी लम्बे निकल सकेंगे। दूसरे, कम जगहोंमें ही काफी पौधे रेशेके लिये मिल जायेंगे। तीसरे, घने होनेपर पौधे स्वभावतः अधिक लम्बे होते हैं। इससे रेशेका वजन बढ़ जाता है। हां, आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करनी पड़ती है। पर अनुकूल वर्षा मिलते रहनेपर इसकी जरूरत नहीं पड़ती।

पौधोंमें ज्योंही फूल लगते दिखाई दें, त्योंही फसल तैयार समझिये। पौधोंको या तो जड़ सहित उखाड़ लीजये या जमीनसे सटाकर हँसियोंसे काट लीजिये। अब इनकी अँटियाँ बाँधकर पानीमें डुबा रखिये। शामके कटे हुए पौधोंको रात-भर पानीमें भिगोनेके बाद ही उनकी खाल अलग होने लायक बन जाती है। जिस तरह पाट या सनकी खाल निकाल कर



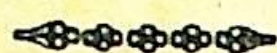
पानीमें पीटकर साफ करते हैं, उसी तरह इन रेशोंको भी पीट कर साफ कर लीजिये।

रेशे निकालनेके लिये जो लोग भिण्डोकी खेती करें, वे सदा ध्यानमें रखें कि अगर पौधोंमें फल लग जायँगे, तो रेशे कड़े और मटमैले रंगके हो जायेंगे और उन्हें उसका समुचित दाम नहीं मिलेगा। एक बातका और भी ध्यान रखना सार्वजनिक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे बहुत ही आवश्यक है—वह यही कि पौधोंको सड़नेका यह काम नगर या गाँवसे दूर किसी जलाशयमें किया जाये।

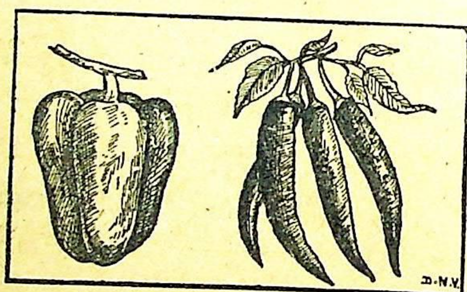
रेशोके लिये खेती करनेका समय भी अनुकूल मिलता है। जेठ-असाढ़में फसल तैयार होनेके बाद ही वर्षा शुरू हो जाती है। अतएव पानी भी उन्हें गड्ढों और नालोंमें काफी मिल सकता है। इन रेशोंकी माँग शीघ्र ही बढ़नेकी सम्भावना है।

मिरचाई

मिरचाईको ठीक शाक नहीं कह सकते। पर शाकके साथ कच्चे-पक्के, गीले या सूखे किसी-न-किसी रूपमें इसका संयोग प्रायः सर्वत्र होता है। सच तो यह है कि यह शाकका स्वाद बढ़ानेवाला एक बनस्पतिजात फल है। हाँ भारतके किसी-किसी प्रान्तमें इसका उपयोग शाककी तरह भी किया जाता है। पूर्व-बङ्गालमें लोग मिरचाई बहुत खाते हैं। मद्रासके लोग तो कभी-कभी सिर्फ मिरचाइयोंका ही शाक बनाते हैं। यह तीखी, चरपरी



और गर्म होती है। हाँ, जीभकी मरी हुई रुचिको तेज जरूर करती है। यह रोगियोंके लिये वर्जित है। सुग्गे या तोते इसे बड़े चावसे खाते हैं। इसकी गन्ध भी बड़ी तीखी होती है। इसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म कण हवाके साथ मिलकर यदि आँखोंमें पड़ जाता है, तो मनुष्यको रुलाये बिना नहीं छोड़ता। जलनेपर तो इसकी तीव्रता मानों और भी सौगुनी बढ़ जाती है। इतना सब होनेपर भी इसका प्रचार घर-घरमें है और प्रायः सभी लोग नित्य ही इसका सेवन करते हैं।



बिहारके दरभङ्गा और मुंगेर जिलोंके कुछ भागमें इसकी खेती बहुत अधिक परिमाणमें होती है और प्रायः सारे भारतमें यहांसे मिरचाई चलान जाती है। जिस तरहसे और-और जगह खलिहानमें अन्नकी ढेरी लगाते हैं, उसी तरह यहाँ मिरचाईका पहाड़-सा लगाते हैं। रेलपर यात्रा करनेवाले इसका दृश्य समस्तीपुरसे बरौनीतक विशेष रूपसे देख पाते हैं।

इसकी खेतीके लिये दूमट सूखी मिट्टी अच्छी होती है।



सीलवाली भूमि ठीक नहीं। भूमिमें यदि नोनका अंश रहता है, तो फसल और भी अच्छी होती है। गोशालाके कूड़े-कतवार और पुराने सड़े हुए गोबरकी खाद बीघा पीछे दो-तीन गाड़ी डाली जाती है। यदि जमीनकी मिट्टी लोनी नहीं हो, तो बीघेमें ५–७ सेर नोन बिखेर देना अच्छा है। खादको खेतकी मिट्टीके साथ मिलाकर खूब जोत-कोड़कर तैयार करके उसे बराबर कर लेते हैं और उसपर दो दो हाथकी दूरीपर लकीरें खींच लेते हैं। इन लकीरोंपर डेढ़-डेढ़ हाथके अन्तरसे इसके पौधे लगाये जाते हैं।

पौधे अंकुरदानोंमें तैयार कर लिये जाते हैं। इसके बीज बैसाखसे लेकर आषाढ़-सावनतक बोये जाते हैं। एक बीघेके पौधोंके लिये प्रायः तीन तोलेतक बीज लगते हैं। जब कोमल पौधे खेतोंमें बैठाये जायें, तब उनकी जड़ोंको थोड़ा-थोड़ा छाँट लेना अच्छा है। रोज धूपके समय इनपर पत्तोंसे आड़ कर देनी चाहिये। जब पौधे जड़ जमा लें, तब आड़की कोई जरूरत नहीं रह जाती। जमीनके रसको देखकर सिंचाई भी समय-समयपर करनी पड़ती है। सोहनी और निरौनी भी समयानुसार करनी चाहिये। इसी समय आस-पासकी जमीनसे पौधोंकी जड़ोंको मिट्टीसे भरते रहना चाहिये। इस प्रकार दो धारियोंके बीचसे पानी सींचनेकी नाली भी आप ही बन जाती है। जब इसके फल कच्चे रहते हैं, तभीसे बिक्री शुरू हो जाती है। पूस-माघतक फसल पकने लगती है। जो लोग

सूखी मिरचाई चलान करते हैं, वे पके हुए फलोंको तोड़कर पहले धूपमें सुखा लेते हैं और तब बोरोंमें बन्द करते हैं।

मिरचाईके पौधेमें भी कीड़े लगते हैं और इसके पत्ते अजीब ढङ्गसे सिकुड़ने लगते हैं। देखते-देखते पूरे पेड़को ही मानो कुष्ट-रोगसे ग्रसित हो जाना पड़ता है। उपेक्षा न कर, फौरन इस नाशकारी रोगके अन्तका उद्योग करना चाहिये। कीड़ोंको पौधों-को बचानेके उपाय अन्यत्र बताये जा चुके हैं—पाठक उन्हीं उपायोंका अवलम्बन करें।

विदेशी सेम या बीम

अपने यहाँ जो सेम फलता है, उसके भी कई प्रकार होते हैं, पर वे सभी सेम लताओंमें फलते हैं। पर यहाँ दो ऐसे विदेशी सेमोंकी खेतीका हाल लिखा जाता है, जो लतामें नहीं, बल्कि खड़ी झाड़ियोंमें फलते हैं। इन सेमोंका प्रचलन क्रमशः बढ़ता जा रहा है और माँग भी बढ़ रही है। ये सेम थोड़े समयमें फलते हैं और स्थान भी कम लेते हैं। इनके लिये मचान खड़ा करनेकी जरूरत नहीं पड़ती। मतलब यह कि ये आसानीसे उपजाये जा सकते हैं और दाम भी अच्छा मिल सकता है।

१–ब्राडबीन–इसका बीज विदेशोंसे भारतमें आता है। कलकत्ते और बम्बईके बीज-विक्रेताओंके यहांसे मँगाया जा सकता है। एक बीघेमें लगभग ४-५ सेर बीज लगते हैं।

दूमट नरम भूमिमें इसकी फसल अच्छी होती है। बीघेमें २ गाड़ी गोबरकी खाद और आठ-दस टोकरी लकड़ी या घास-पातकी राख डालकर इसकी जमीन तैयार की जाती है। बरसात के अन्त और जाड़ेके आरम्भमें इसका बीज बोया जाता है। बोनेके पहले इसके बीजोंको धूपमें गरम किये हुए जलमें १०-१२ घण्टेतक भिगो रखना चाहिये। बादको पानी सुखाकर बोना चाहिये।

खेत तैयार करके तीन-तीन हाथके अन्तरसे ४।५ अंगुल गहरा नाला-सा तैयार कर लीजिये। इस नालेकी चौड़ाई एक हाथ होगी। इसी नालेमें बालिश्त-बालिश्त भरकी दूरीपर बीज बोते जाइये। बीजको जमीनसे १॥-२ इञ्च नीचे रखिये। इस प्रकार धारियोंमें बीज बोनेके बाद जब वे अंकुरित हो आवें और पौधे ४।६ इञ्चके हो जायें, तब दोनों बगलकी ऊँची मिट्टीको पौधोंकी जड़ोंमें भरते जाइये। इस तरह मिट्टी भर देनेपर जड़ोंकी तरफ मेंड़े बन जायेंगी और जो पहले मेंड़ थी, वह अब नालेके रूपमें आ जायगी। इस नये बने हुए नालेसे आवश्यकतानुसार सिंचाई का काम लिया जा सकता है।

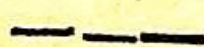
जब पौधे डेढ़-दो हाथके हो जाते हैं, तब उनमें फूल होना शुरू होता है। इसी समय यदि पौधोंकी टहुनियाँ खोंट दी जाती हैं, तो उनमें शाखा-प्रशाखाएँ अधिक निकल आती हैं और फल भी अधिक होते हैं।

इसका शाक स्वादिष्ट होता है।

बौना सेम—यह भी विदेशी शाक है और इसे अँगरेजीमें ड्वार्फ बीम या बुश बीम कहते हैं। इसकी खेती अब यहाँ भी काफी होने लगी है, पर सब जगह जैसी चाहिये वैसी फसल नहीं होती।

इसकी खेती ब्राडबीनकी ही तरह की जाती है। अन्तर यही है कि इसकी धारियाँ तीनकी जगह डेढ़ हाथपर ही लगायी जाती है। इसका कारण यह है कि इसका पौधा छोटा होता है। यह हाथ-डेढ़ हाथसे अधिक ऊँचेतक नहीं जाता और एक डेढ़ महीनेके भीतर ही इसकी फलियाँ खाने योग्य हो जाती हैं।

हाँ, इसके पौधे कुछ सुकुमार होते हैं—न अधिक धूप बर्दाश्त कर सकते हैं न अधिक छाया। इसलिये कुछ लोग इसकी खेती अन्य मचानवाली भाजियोंके नीचे करते हैं, ताकि उन्हें धूप और छाया दोनों बारी-बारीसे मिलती रहें।



मटर या छीमी

यह विशुद्ध शाक नहीं है। इसकी गिनती अन्नोंमें और खासकर दलहनमें भी होती है। पर इसकी हरी फलियोंके दाने शाकमें डाले जाते हैं। गोभी-खासकर बँधी गोभीके साथ मिलानेपर यह बड़ा स्वादिष्ट होता है। इसे कच्चा भी खाते हैं और कच्चा खाना अधिक लाभदायक होता है। इसमें

विटामिन काफी होता है। आलूके साथ मिलाकर भी इसका शाक बनता है।

जो लोग इसकी खेती दाल या पके फलोंके लिये करते हैं, वे तो यों ही खेतका जोत फोड़कर बीज छींट देते हैं और आवश्यकतानुसार कभी-कभी महीनेमें एक या दो बार सिंचाई कर देते हैं। कुछ स्थानोंमें सिंचाई बिलकुल ही नहीं की जाती। वे लोग इसे रबीकी खेतीके साथ उपजाते हैं। उनकी फसल निकृष्ट जातिकी होती है। फिर भी लोग साग बाजारमें प्रायः यही मटर छीमीके रूपमें खरीदते और उसे शाक बनानेके काममें लाते हैं।

परन्तु शाकके काममें लानेके लिये मटरकी खेती इस प्रकार नहीं की जानी चाहिये। विधिवत खेती करनेपर मटर बहुत ही उत्कृष्ट होते हैं और उनकी छीमियाँ भी काफी बड़ी होती हैं—दाने पुष्ट और बड़े होते हैं।

मटरका पौधा होता तो कुछ लताके रूपमें ही है; पर इसके लिये मचान बाँधनेकी जरूरत नहीं पड़ती। हरएक पौधेके आगे आधारके लिये एक-एक पतली डाल या बाँसकी फट्ठी गाड़ देना ही यथेष्ट है।

इसकी खेती हल्की दूमट मिट्टीमें अच्छी होती है। इसके लिये उन घरोंपरकी मिट्टी अच्छी खाद है, जिनपर मुर्गे या कबूतर दाना चुगते हैं; क्योंकि मुर्गे, कबूतर और बत्तक आदि पक्षियोंकी बीट इसके लिये बहुत अच्छी खाद है। पर यह



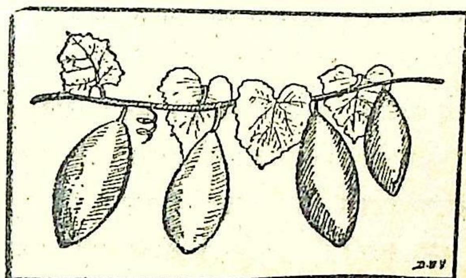
खाद सर्वत्र सुभीतेसे नहीं मिलती। ऐसी दशामें बीघा पीछे एक या दो गाड़ी पुराना गोबर और १२।१५ टोकरी राख* लगती है। खेत तैयार करके लम्बी लकीरें बना ली जाती हैं और उन्हीं लकीरोंपर एक एक या डेढ़-डेढ़ बालिश्त की दूरीपर बीज बो दिये जाते हैं। बोनेके पहले बीजोंको रात भर पानी में भिगो रखनेसे पौधे शीघ्र अंकुरित होते हैं। भादोंमें जमीन तैयार करके आश्विन में इसके बीज बोये जाते हैं। पौधे निकल आवें तो उनकी जड़ोंमें मिट्टी भरकर पानीका रास्ता बना लेना चाहिये। आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी पड़ती है। घासोंकी सफाई करते समय जड़की मिट्टी हल्की करते रहना चाहिये। मटरके अच्छे विदेशी बीज भी बहुत तरहके आते हैं। मटरकी छीमियोंको बड़ा करनेके लिये, पौधेके सिरेको उस समय खोंट देना चाहिये, जब फूल खूब निकल आये हों। इसका प्रयोग करके देख लेना चाहिये।

---

* राखका अर्थ सर्वत्र लकड़ी, कंडे, ओपले और खर-पातकी भस्म समझना चाहिये; पथर-कोयलेकी राख नहीं।

चौथी क्यारी

लताओंमें फलनेवाली साग-सब्जियाँ



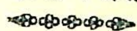
परवल

परवल या परोरा विशुद्ध भारतीय शाक है। यह जैसा कि स्वादिष्ट है वैसा ही लाभदायक भी है। इसका शाक कई प्रकारसे बनता है। इसे तलकर भी खाते हैं और बेसनके सहारे इसकी पकौड़ी भी बनाते हैं। कहीं-कहीं परवलकी पत्तियाँ भी लोग विविध प्रणालियोंसे खाते हैं। परवलकी लत्ती-पत्ती उबालकर ज्वरके रोगियोंको काढ़ा पिलाया जाता है। परवलमें उत्तम कोटि-का विटामिन रहता है। कभी-कभी डाक्टर लोग क्षय-रोगके बीमारोंको इसका छिलका सेवन करनेका आदेश देते हैं। परवल-का छिलका उतारकर शाक बनाना ठीक नहीं। इससे इसका गुण बहुत अंशोंमें नष्ट हो जाता है।

इसकी खेती दियारे* में अच्छी होती है। पर दूमट मिट्टीमें भी खेती की जा सकती है। कड़ी और चिकनी मिट्टीमें इसकी उपज अच्छी नहीं होती। बीघा पीछे ४-५ गाड़ी गोबरकी खाद डाली जाती है। इसके लिये जमीनमें जोत बहुत अच्छी होनी चाहिये। परोरेकी लत्तियोंकी जड़े दो-ढाई हाथतक जमीनके नीचे जाती हैं। इसलिए जिन स्थानोंमें गोड़ें (वे जड़े, जो बीजका काम करती हैं) बैठाई जाती हैं, उनकी मिट्टी काफी गहराईतक पोली कर ली जाती है। दियारोंमें ऐसा करनेकी जरूरत कम पड़ती है, क्योंकि उनकी मिट्टी स्वभावतः पोली और नरम होती है। परोरेका बीज नहीं बोया जाता। इसकी गेंड़े या जड़े ही बीजके रूपमें प्रयुक्त होती हैं। एक बीघेमें १५-१६ सेरतक गेंड़ें लगती हैं। परन्तु परोरेकी खेतीकी जमीन ढालू हो, तो और भी उत्तम है। इसकी जड़ोंमें पानी जमना बहुत खराब होता है। जमीन सीलवाली भी न हो, इसका ध्यान रखना चाहिये।

बरसातमें इसकी जमीन जोत-कोड़कर ठीक कर ली जाती है। और भादोंके अन्त या आश्विनके प्रारम्भमें खाद मिलाकर फिर एक बार जमीनको जोत लेते हैं। कहीं-कहीं इसकी खेती असाढ़में भी करते हैं। पर अच्छा समय बरसात-

* दियारा उन भूखण्डोंको कहते हैं, जो नदीके किनारे दूरतक फैले हुए होते हैं। उनकी मिट्टीमें बालू कुछ अधिक रहती है और बरसातके समय ये भूमि-भाग प्रायः नदीसे प्लावित हो जाते हैं।



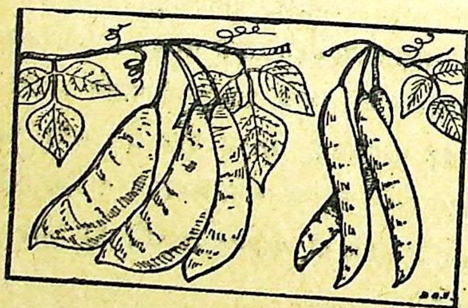
के भादका (आश्विन-कार्त्तिक) है। खेत तैयार करके तीन-चार हाथकी दूरीसे लकीरें खींच लीजिये और इन लकीरोंपर चार-चार हाथपर एक-एक घेरा तैयार कर लीजिये। इन घेरोंकी मिट्टीमें उत्तम रीतिसे खाद मिलाकर मिट्टीको खूब भुरभुरा कर लेना उचित है। इन्हीं घेरोंमें एक-एक गेंड़ बोते जाइये। गेंड़ोंके ऊपर थोड़ा-थोड़ा खर या पुआल डाल दीजिये। जबतक इनमेंसे नये पौधे अंकुरित नहीं हों, तबतक सप्ताहमें ३-४ बार थोड़ा-थोड़ा पानी छिड़कते रहिये। १५-२० दिनोंमें पौधे निकल आते हैं। अब उनपरसे खर या पुआल हटा दीजिये। जब पौधे बालिश्त भरके हो जायें, तब उनकी जड़की मिट्टी सावधानीसे खोदकर ढीली कर दीजिये। जब पौधे कुछ और बड़े हो जायें, तब उनकी जड़ोंको मिट्टीसे भरकर ऊँचा कर दीजिये। परोरेकी लत्तियोंके लिये मचान बनानेकी जरूरत नहीं पड़ती; ये जमीनमें ही पसरकर फलती हैं।

जमीनका रस समझकर थोड़ा-थोड़ा पानी सींचते रहना और खेतकी घास साफ करते रहना चाहिये। आश्विन-कार्तिकमें बोये गये परोरेकी गेंड़ें माघ फाल्गुनमें फलने लगती हैं। इस समय परोरेका दाम काफी महँगा होता है। नयी फसल और स्वादमें उत्कृष्ट होनेके कारण लोग भरपूर दाम देकर परोरा खरीदते हैं। कुछ दिनोंतक तो बड़े-बड़े शहरोंमें ।।।) और १) सेरतक बिक जाता है।

एक बारका लगाया हुआ परोरेका पौधा तीन वर्षतक फल

देता है। हाँ एक मौसमका फलना खतम हो जानेपर, पौधेको काट-छाँटकर छोटा कर देते हैं और उसकी जड़में फिर नये सिरेसे मिट्टी और खाद भरकर छोड़ देते हैं। परोरेकी खेती करनेवालोंको दो बातोंपर खास तरहसे ध्यान रखना चाहिये। एक यह कि जब वे गेंड़ खरीदें, तब या तो अपनी आँखों देखे हुए, खेतसे लावें या बहुत ही विश्वासी दूकानदारसे मँगावें। कारण परोरेकी कुछ गेंड़ें ऐसी होती हैं, जिनसे पौधा तो खूब लहलहाता हुआ निकलता है, पर फलता नहीं। दूसरी बात ध्यानमें रखनेकी यह है कि हर तीसरे वर्षके बाद परोरेके खेतको एक वर्ष योंही जोत कोड़कर छोड़ दें—उसमें परोरा न लगावें। चौथा वर्ष खाली छोड़कर फिर पाँचवें वर्ष नयी गेंड़ें बैठावें। इससे जमीनकी उर्वरता बहुत अंशोंमें बढ़ जाती है।

सेम



सेमकी फलियोंका शाक अच्छा होता है। खटाई डालकर

भी इसका शाक कहीं-कहीं बनता है। सेम रुचिवर्द्धक है। पर इसका सेवन लगातार नहीं करना चाहिये। कभी-कभी इससे खुजली और फोड़े-फुन्सियोंकी शिकायत होती है।

सेमकी खेती प्रायः सब प्रकारकी मिट्टियोंमें होती है। इसकी खेती अपेक्षाकृत आसान भी है। हाँ, सेमके पौधोंमें स्वच्छ धूप और हवाका लगना आवश्यक है। मचान या बाँसकी खड़ी फट्ठियोंपर इसकी लतायें चढ़ा दी जाती हैं—कभी-कभी पेड़ोंपर भी चढ़ायी जाती हैं।

जेठसे लेकर सावन भादोंतक इसके बीज बोये जाते हैं। पुराने गोबरकी खाद बीघेमें २–३ गाड़ी पर्याप्त है। खेत तैयार करनेके बाद तीन-तीन हाथकी दूरीपर लकीरें खींच लीजिये और इन लकीरोंपर ढाई-ढाई या तीन-तीन हाथके अन्तरसे घेरे तैयार कीजिये। इन घेरोंकी मिट्टीमें खाद मिलाकर मिट्टीको भुरभुरा बना लीजिये, ईंट-खपड़ेके टुकड़ों और कंकड़ियोंको चुन डालिये। ऐसे हरएक घेरेमें दो-दो या तीन-तीन बीज बो दीजिये। बीघेमें सेर सवा सेरतक बीज लगते हैं। बीजोंको जमीनमें ३–४ इञ्च भीतर रखिये। हाँ, ये बीज यों ही खेतमें बोनेसे बहुत बिलम्बसे निकलते हैं। इसलिये बोनेके पहले १०–१२ घण्टेतक बीजोंको पानीमें भिंगो लेना अच्छा है। जब पौधे निकल आवें, तब हरएक घेरेमें अधिक जानदार पौधेको छोड़कर बाकी को उखाड़ फेंकना चाहिये। जो बीज असाढ़में बोये जाते हैं, उनमें पानी पटानेकी जरूरत कम

पड़ती है। हाँ, अनावृष्टि हो तो बात दूसरी है। महीनेमें एक दो बार इनकी जड़ोंकी घास साफ करते रहना पड़ता है।

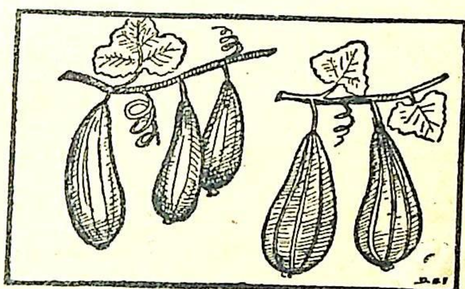
पौधे जब एक बालिश्त या हाथ भरके हो जाते हैं, तब इनके पास बाँसकी फट्टी या रहेठा गाड़कर उनके चढ़नेका सुभीता कर देना चाहिये। जब इनकी लतायें ऊपर चढ़ आवें तब मचान बाँध देना चाहिये। ये मचानोंपर फैलकर फलते हैं। बरसात खतम होनेके बाद ही इनमें फूल होना शुरू होता है और माघ-फागुनतक सेम फलते रहते हैं। सेमकी कोमल फलियाँ ही शाकके काम आती हैं। अधिक पुष्ट होनेपर छिलका कड़ा हो जाता है और शाक अच्छा नहीं बनता।

आकार-प्रकार और रंगके भेदसे सेमकी बहुत किस्में होती हैं। कोई सफेद होता है तो कोई गहरा हरा। कोई चौड़ा और बड़ा होता है, तो कोई छोटा कोई मोटा। बैगनी रंगका भी सेम कभी-कभी देखनेमें आता है। कुछ सेम तो ८-९ इञ्चतक लम्बे और खूब गूदेवाले होते हैं। इनका वजन भी काफी होता है। दाम अच्छा मिलता है। चार-पाँच फुट लम्बी होनेके बाद यदि लताओंकी फुनगियाँ खोट दी जायें, तो बहुत शाखा-प्रशाखाएँ निकल आती हैं और फलियाँ भी अधिक लगती हैं।

तरोई

तरोई यों तो कई प्रकारकी होती है, परन्तु साधारणतः हम उनके दो प्रकार मान सकते हैं। एकको नेनुआ कहते हैं और

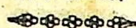
दूसरेको झींगा या झिंगुनी। नैनुआ आकारमें झींगेसे बड़ा होता है। इसका ऊपरी भाग मुलायम और सुडौल होता है। झींगेका ऊपरी भाग कड़ा और रीढ़दार होता है। दोनोंके स्वाद में भी काफी अन्तर है। पर दोनोंकी खेती प्रायः एकही प्रकारसे होती है और जाति एवं गुणमें दोनों बराबर हैं। तरोईका शाक



बहुत ही अच्छा बनता है। पर अधिक पुष्ट या बूढ़े हो जानेपर इसकी कोमलता नष्ट हो जाती है और भीतर जालसी बँध जाती है। तरोई मचानपर फलती है।

नैनुआ या घेवरा—इसकी लता झींगेसे बड़ा होता है और फल भी बहुत भारी होते हैं। इसलिये इसका मचान मजबूत बनाना चाहिये। इसके बीज़ बोये जाते हैं। बोनेका समय चैतसे जेठतक है। यह बरसातमें खूब फलता है। जिस समय और-और साग सब्जियाँ कम मिलती हैं, उस समय यह बहुतायतसे होता है।

इसकी खेती चैतसे असाढ़तक शुरू की जाती है यानी इसी



समयके बीच इसका बीज बोया जाता है। इसके लिए दूमट मिट्टी अच्छी होती है। बीघेमें दो गाड़ी गोबरकी खाद डाली जाती है। खेत तैयार करके पांच-छ हाथकी दूरीसे लकीरें खींची जाती हैं और उन लकीरोंपर छ-छ हाथपर घेरे तैयार किये जाते हैं। बीज बोते समय जमीन नरम और सरस होनी चाहिये। इसकी खेती नरम मौसममें की जाती है, इसलिये समय-समयपर इसकी सिंचाई अवश्य करनी पड़ती है। जड़के आस पासकी जमीनको साफ करते रहना चाहिये।

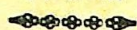
प्रति पौधेमें यदि दो-चार फल छोड़ दिये जायँ और उन्हें पकने दिया जाय, तो उनसे बीजके अतिरिक्त एक और काम लिया जा सकता है। लत्तियोंके सूख जानेपर इन फलोंको तोड़कर इनका अग्र-भाग काटकर बीज निकाल लीजिये और पानीमें भिगोकर इनके ऊपरी आवरणको हटा दीजिए। अब यह सिर्फ जालियोंका बना हुआ एक स्पंजनुमा पदार्थ हो जायेगा। बड़े-बड़े शहरोंमें लोग इससे शरीर रगड़ने और साबुन लगाकर शरीर साफ करनेका काम लेते हैं। इस प्रकार इन पके हुए फलोंसे हम बीजके अतिरिक्त कुछ दाम भी पा सकते हैं।

झींगा या झिगुनी—आकार-भेदसे झींगा कई प्रकारका होता है। इसकी खेती दो बार होती है। एकका बीज माघ-फागुनमें और दूसरेका बैसाख-जेठ-असाढ़में बोया जाता है। जो बीज माघ-फागुनमें बोया जाता है इसकी लता बहुत

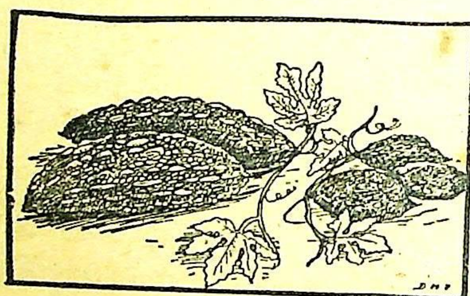
बड़ी नहीं होती। इसके लिये मचान बनानेकी जरूरत नहीं पड़ती। यह जमीनमें ही फैलती और फलती है। खेत तैयार करके पाँच-पाँच या छ-छ हाथकी दूरीपर घेरोंमें इसके बीज बोये जाते हैं। पौधोंके बड़े होनेपर जड़को मिट्टीसे भरकर कुछ ऊँचा कर देना चाहिये। चूँकि इसकी लता जमीनमें फैलती है, इसलिये इसका खेत महीनेमें एक या दो बार साफ करते रहना पड़ता है। जो बीज वैसाखसे असाढ़तक बोये जाते हैं, उनकी लताएँ बड़ी होती हैं। इनके लिये मचान बाँधना पड़ता है। इनके बीज सात-सात या आठ-आठ हाथकी दूरीपर घेरे बनाकर लगाये जाते हैं। लता जब कुछ बड़ी होती है, तब उसे आधार देकर मचानपर चढ़ानेकी व्यवस्था करनी पड़ती है। इनकी खेती करनेवाले यदि केवल घेरोंमें ही खाद डालें, तब भी कोई खास हानि नहीं होती। पर खेत जोतते समय सारे खेतमें खाद मिलानेकी परिपाटी अच्छी है। इससे तरोईकी फसलके बाद उसी खेतमें जब दूसरी चीज लगायी जायेगी, तब वह खेत खूब उर्वर रहेगा।

करेला

करेला आकार और समय भेदसे कई प्रकारका होता है। यह कड़वा या तिक्त स्वादवाला होनेपर भी लोग बड़ी रुचिसे इसका शाक खाते हैं। इसका शाक कई तरहसे बनाते हैं। पूरे और बड़े आकारवाले करेलोंको एक तरफसे चीरकर

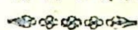


उसके बीये वगैरह निकाल दीजिये। कच्चे खट्टे आमोंका गूदा कूटकर और मिर्च, नमक, मसाले भरकर इसे तेल या घीमें तल लीजिये, फिर भाफ देकर उबाल लीजिये। इस प्रकार यह बहुत ही स्वादिष्ट अँचारका काम देता है। इसे आप २-३ दिन-तक रख भी सकते हैं— खराब नहीं होता। करेला पित्तको शान्त रखता और रुचि बढ़ाता है। इसका बीज तो बहुत ही लाभ-



दायक होता है। कहते हैं, शीतलाके प्रकोपके समय एक सप्ताह-तक नित्य प्रातःकाल करेलेके पत्तोंका रस चम्मच भर और दो-एक बीज खा लेनेसे शीतला या बसन्त रोगका आक्रमण नहीं होता। करेला रेचक होता है।

इसकी खेतीके लिये दूमट मिट्टी अच्छी है। पुराने गोबर और राख या आँवेंकी जली हुई मिट्टीकी खाद बीघा पीछे एक गाड़ी काफी होती है। इसकी खेती सालमें दो बार होती है। पहली बार चैतसे जेठतक और दूसरी बार सावनसे आश्विन-



कार्तिकतक बोया जाता है। पहली बारके फल बड़े होते हैं। इसके पौधे भी दो तरहके होते हैं—एक बड़ा और दूसरा छोटा। जो पौधे बड़े होते हैं, उनकी लता दूरतक फैलना चाहती है। इसके लिये मचान बनानेकी जरूरत पड़ती है। दूसरेके लिये नहीं, क्योंकि उसकी लता दूरतक नहीं फैलती। जो लता जमीन-में फैलती और फलती है, उसकी जमीनकी सोहनीपर अधिक ध्यान देना पड़ता है।

करेलेके बीज भी घेरोंमें बोये जाते हैं। चार-पाँच हाथपर बीज बोये जाते हैं। घेरेमें दो तीन बीज बोते हैं, पर एक पौधेको रखकर बाकीको उखाड़ फेंकते हैं। बरसातके दिनोंमें पौधोंकी जड़ोंको मिट्टी भरकर ऊँचा कर देना चाहिये, ताकि जड़में पानी इकट्ठा होने नहीं पावे।

एक प्रकारकी छोटी करैली और होती है, जिसकी लता जमीनमें ही फैलती और फलती है। इसके फल बहुत छोटे होते हैं। स्वाद इसका अपेक्षाकृत अधिक कड़वा होता है। इसकी खेती भी उपर्युक्त प्रणालीसे ही होती है। पर इसके बीज माघ-फाल्गुन-में ही बोये जाते हैं।

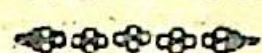
करेलेकी खेती अपेक्षाकृत आसान है। यह रेतीली (बलुगर) मिट्टीके सिवा और सब प्रकारकी मिट्टीमें हो सकती है। हाँ, आवश्यकतानुसार सिचाई जरूर करनी पड़ती है। बीघेमें पाव-डेढ़ पाव बीजकी जरूरत पड़ती है।

बोरो या बरवटी

कच्चे और कोमल बोरोका शाक अच्छा बनता है। जब फल पुष्ट हो जाते हैं, तब ऊपरका छिलका रेशेदार और कुछ कड़ा हो जाता है। ऐसी अवस्थामें लोग इसके पुष्ट बीजोंको मटरकी तरह शाकमें मिलाकर खाते हैं। मटरकी अपेक्षा इसकी फलियाँ प्रायः दूनी लम्बी होती हैं, पर पतली। मटरके दाने गोल होते हैं, इसके लम्बे और चिपटे। शाकके अतिरिक्त दालके लिये भी इसकी खेती की जाती है।

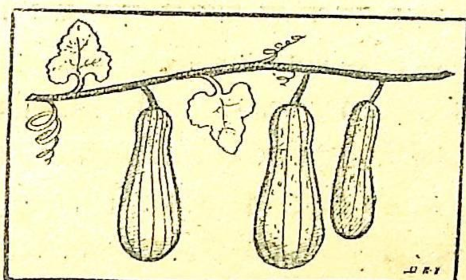
बोरोके लिये ऊँची, दूमट मिट्टीवाली जमीन अच्छी होती है। पुराने गोबरकी खाद बीघा पीछे एक-डेढ़ गाड़ी डाली जाती है। जेठमें जमीन तैयार करके असाढ़-सावनमें फिर एक बार जोत कर इसके बीज छींट दिये जाते हैं। बीघेमें सेर सवा सेरतक बीज लगता है। पौधे अगर बहुत घने उग आवें, तो बीच-बीचसे कुछ पौधे उखाड़ दिये जाते हैं। इसमें सिंचाईकी जरूरत प्रायः नहीं पड़ती; क्योंकि ठीक बरसातमें ही इसकी खेती होती है। हाँ, सूखा हो, तो सींचना पड़ता है। बोरोकी लताके लिये मचान बनानेकी जरूरत नहीं। लताओंके आधारके लिये बाँसकी फट्टियाँ या कच्चियाँ अथवा अरहरके सूखे पौधे गाड़ दिये जाते हैं। उन्हीं-पर फैलकर ये फलने लगती हैं।

जो लोग दानेके लिये इसकी खेती करते हैं, उन्हें चाहिये कि पौधोंको खेतमें ही सूख जाने दें। बादको उन्हें एकत्र कर झाड़ पीट कर दाने अलग कर लेने चाहिये।



हरी खादके लिये भी बोरोकी खेती की जाती है। जब पौधे दो-ढाई हाथके हो जाते हैं, तब उनपर हल चला दिया जाता है और पौधोंको मिट्टीमें मिला दिया जाता है।

खीरा



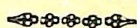
खीरा कोमल अवस्थामें अधिकतर कच्चा खानेके काम आता है। जब वह अधिक पुष्ट होता है, तब इससे शाक बनाते हैं। इसका शाक तो अच्छा होता ही है, दहीके साथ इसका रायता बहुत उत्तम बनता है। खट-मीटी चटनी भो इसकी अच्छी बनती है। इसको बेसनमें भरकर पकौड़ी भी लोग बनाते हैं बैसाख-जेठके दिनोंमें दोपहरके वक्त कोमल कचा खीरा नोन-मिर्चके साथ बहुत ही स्वादिष्ट और कलेजा तर करनेवाला प्रतीत होता है।

दूमट मिट्टीमें इसकी खेती की जाती है। गोबर और गोशालाके कूड़े-करकटकी खाद इसके लिये अच्छी होती है।

बीघा पीछे २।३ गाड़ी खाद देनेका नियम है। बीज बोनेके कमसे कम १५-२० दिन पहले जमीन जोत-कोड़कर भली भाँति तैयार कर ली जाती है। ६।७ हाथ दूरीपर इसके लिये थेरे बनाने पड़ते हैं। बीघेमें डेढ़-दो छटाँकतक बीज लगते हैं। उन थेरोंमें ३।४ बीज डाले जाते हैं। जब पौधे निकल आते हैं, तब उनमेंसे अधिक जानदार एक या दो पौधोंको छोड़ बाकीको उखाड़ डालना चाहिये। जब पौधोंमें ५।६ पत्तियाँ निकल आती हैं, तब उनकी जड़ें मिट्टीसे भर दी जाती हैं, ताकि पानी अधिक ठहरने नहीं पावे। आवश्यकतानुसार खीरेकी लताओंको सींचना भी पड़ता है। जब लताएँ कुछ बड़ी हो जाती हैं, तब उन्हें मचानपर चढ़ानेकी व्यवस्था करनी पड़ती है। एक बड़े मचानपर एक साथ ४-५ पौधोंको चढ़ा सकते हैं।

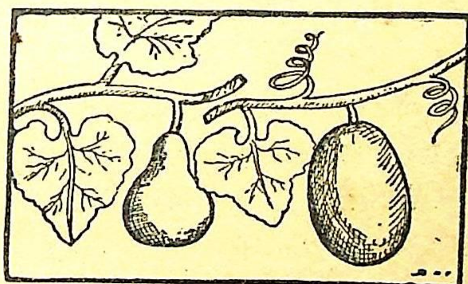
देशी खीरेकी खेती सालमें दो बार होती है। पहली बार माघके अन्तसे चैतके मध्यतक और दूसरी बार जेठ असाढ़में इसके बीज बोये जाते हैं। आजकल यहाँ बहुत प्रकारके विदेशी खीरेके बीज आते हैं और उनकी खेती किसी भी समय की जा सकती है। देशी खीरे जाड़ेमें नहीं फलते; पर यह विदेशी खीरे जाड़ेमें भी फलते हैं।

खीरेके पौधोंकी सुरक्षाके लिये कुछ बातोंपर खास तौरसे ध्यान देना चाहिये। जब पौधे हाथभरके हो जायें, तब उनकी जड़ोंकी मिट्टी ऊँची कर दी जाये। १०।१५ दिनोंके अन्तरसे जड़ोंकी मिट्टीको हौले हाथोंसे खुरपीके सहारे ढीला करते

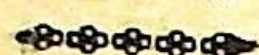


रहना चाहिये। खीरेके नये कोमल पत्तोंके जानी दुश्मन एक प्रकारके लाल कीड़े होते हैं। इनसे पौधोंको बचाना बहुत ही आवश्यक है, नहीं तो वे देखते-देखते उनका सर्वनाश कर डालते हैं। मचानपर फैलनेवाली लताओंके कीड़ोंको भगानेका एक अच्छा रास्ता है—मचानके नीचे धुआँ करना। खैनीके धुएँसे कीड़े बहुत घबड़ाते हैं। इसके अतिरिक्त केवल कोमल पल्लवोंपर एक सप्ताहतक लकड़ीकी राख थोड़ी-थोड़ी हर रोज या हर दूसरे रोज डालनेसे भी ये कीड़े नहीं बैठते।

कद्दू या लौकी



आकार और समयके भेदसे लौकी या कद्दूके कई प्रकार होते हैं। कोई लौकी गोल और नाटे आकारकी होती है, तो कोई पतले और लम्बे आकारकी। कुछ लौकी सफेद होती है तो कुछ हरी; एक प्रकारकी कड़वी लौकी भी होती है। इससे साधु संन्यासी कमण्डल बनाते हैं। यह कड़वी लौकी और

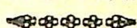


इसके बीज केवल दवाके काममें आते हैं,—खानेके नहीं। जो लौकी हम लोग खाते हैं, वह कड़वी नहीं होती। इसका शाक अच्छा बनता है। यह विशुद्ध भारतीय वनस्पति है। इसका रायता उत्कृष्ट होता है। इसकी खीर भी बनती है। लौकीका संस्कृत नाम अलाबू है। कद्दू आयुर्वेद-ग्रन्थोंमें पित्तदोष दूर-करनेवाला, भूख और खानेमें रुचि बढ़ानेवाला और बलवृद्धि करनेवाला कहा गया है।

इसकी फसल बारहों महीने न्यूनाधिक रूपमें मिलती ही रहती है; क्योंकि इसकी खेती शुरू करनेके लिये दो लम्बी अवधियाँ मिलती हैं। पहली बार इसकी खेती चैतसे जेठ तकके बीचमें शुरू कर सकते हैं और दूसरी बार, आश्विनसे पौषतक।

दूमट या गाँव अथवा शहरके पासकी पड़ती जमीनकी मिट्टी इसके लिये अच्छी होती है। पुराने सड़े हुए गोबर, गोशालाका बुहारन चावलका धोवन और कुम्हारके आँवेकी जली हुई मिट्टी या राख इसके लिये अच्छी खाद है।

निर्वाचित खेतमें चार-चार हाथकी दूरीपर इसके बीज बोनेके लिये हाथभर लम्बे, हाथभर चौड़े और हाथ-डेढ़ हाथ गहरे गड्ढे खोद लीजिये। इन गड्ढोंकी मिट्टीमें अगर कंकड़-पत्थर हों तो उन्हें चुनकर साफ कर लीजिये। उसके साथ उपर्युक्त खाद एक-एक टोकरी मिलाकर गड्ढोंको फिर भर दीजिये। इसके बाद ४।६ दिनोंके अन्तरसे इन गड्ढोंको खोद-

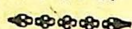


कर मिट्टी उलट-पलट लीजिये। दो-तीन बार ऐसा करनेके बाद हरएक घेरेमें ४-५ बीज बो दीजिये। इसके बीजोंको बोनेके पहले १०-१२ घण्टोंतक पानीमें भिगो लेना अच्छा है। इससे ये एक सप्ताहके भीतर ही अंकुरित हो आते हैं। जब पौधे एक-डेढ़ बालिश्तके हो जायें, तो उनमेंसे चुनकर एकके सिवा बाकी सबको, मोह छोड़कर, उखाड़ फेंकिये।

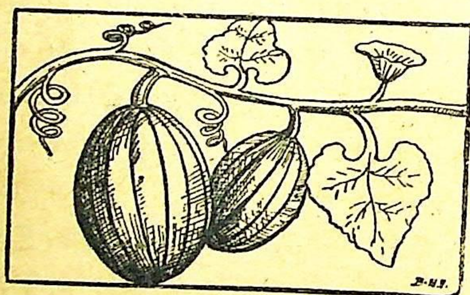
ज्यों-ज्यों पौधा बड़ा होता जाये, त्यों-त्यों उसे सहारा देकर मचानकी ओर चढ़ाते जाइये। जड़की मिट्टी कुछ ऊँची कर दीजिये। समय-समयपर आवश्यकता समझकर जल सींचते रहिये। लौकी काफी वजनदार होती है, इसलिये इसके मचानका मजबूत होना जरूरी है। फलोंको लम्बा और बड़ा करनेके लिये कुछ लोग जलसे भरे गड्ढों या पोखरोंके ऊपर इसका मचान बाँधते हैं और उसीके किनारे बीज बोते हैं। मचानके नीचे लटके हुए फलके ठीक सामने अगर किसी गमले या नादमें भी पानी भरकर रख दिया जाये, तो फल अपेक्षाकृत बड़े होते हैं। यह बात परीक्षित और निश्चित है। तालाब या जलाशयके ऊपर लटकनेवाले फल तो प्रायः ही बहुत बड़े होते देखे जाते हैं।

कोंहड़ा या कुष्माण्ड

कोंहड़ेको कहीं कुम्हड़ा, कहीं कदीमा और कहीं बैताडू भी कहते हैं। नाम सादृश्यके विचारसे तो यह कोंहड़ा ही संस्कृतका

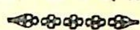


कुष्माण्ड जान पड़ता है, पर कुछ लोगोंका कहना है कि इसे कुष्माण्ड नहीं कहते—कुष्माण्ड भतुए या पेठेको कहते हैं। जो हो, इसका निर्णय शब्दशास्त्री करें। हमें तो यहाँ इसकी खेती और इसके सामान्य गुणागुणसे काम है। कोंहड़ेका शाक बनता है और यह बड़ा सुस्वादु एवं मीठा होता है। कुछ लोग मीठे-पनके कारण ही इसको पसन्द नहीं करते, कुछ लोग इसके शाकमें खटाई डालना परम आवश्यक बताते हैं और कुछ लोग तो यहाँतक इसके विरोधी पाये जाते हैं कि वे इसे सर्वथा



हानिकारक मानते हैं। वे कहते हैं, यदि कोई लगातार सवा महीनेतक दोनों शाम इसका शाक खाये तो वह अन्धा हो जाये। परमात्मा जाने, यह बात कहाँतक सच है, पर साधा-रणतः सभी श्रेणीके भारतवासी इसे खाते हैं और प्रायः बारहो मास यह मिलता भी है।

इसकी खेती सालमें तीन बार होती है। पहली बार वैसाख-जेठमें, दूसरी बार आश्विन-कार्तिकमें और तीसरी बार

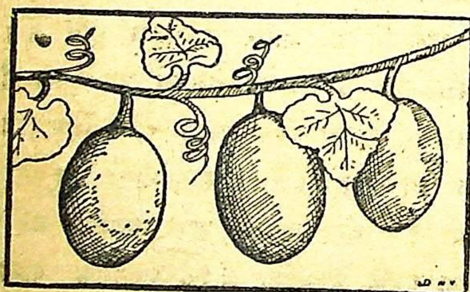


पूसमें इसका बीज बोया जाता है। पहली बोवनीकी फसल बरसातके अन्तसे जाड़ेके शुरूतक, दूसरीकी फसल जाड़ेके मध्यसे ग्रीष्मके मध्यतक और तीसरी बारकी फसल ग्रीष्मके मध्यसे बरसातके मध्यतक मिलती है। इसके अतिरिक्त इसके सुपक्व फल लोग विवाह-शादी या यज्ञादिके अवसरके लिये छीकेमें लटकाकर बहुत दिनोंतक सुरक्षित रखते हैं। बङ्गालमें तो लोग इसके पत्तों और पौधोंका भी सुस्वादु शाक बनाते और खाते हैं।

इसकी लता बहुत बड़ी होती है, उसमें डालियाँ भी काफ़ी होती हैं। फल भी बड़े और वजनदार होते हैं। इसलिये कोंहड़ेका मचान काफी मजबूत बनाना आवश्यक है। पड़ती जमीन, छारन (नदीका रिक्त गर्भ) और दियारेकी जमीनमें इसकी उपज अच्छी होती है। इसकी खेती कद्दूकी प्रणालीसे ही की जाती है। वह प्रणाली ऊपर बतायी जा चुकी है। बीज बोनेके पहले बीजोंको ८-१० घण्टेतक पानीमें भिंगो रखना अच्छा है। जमीनके रसको समझकर समय-समयपर सींचनेकी जरूरत पड़ती है। कीड़ोंके उपद्रवसे फलोंको बचानेके लिये उनपर राख छिड़क देना या मचानके नीचे धुआँ करना अच्छा है। हाँ, एक बात और ध्यानमें रखनी चाहिये वह यही कि बरसातमें बोये जानेवाले कोंहड़ेके पौधे बहुत दूरतक फैलना चाहते हैं, इसलिये जो बीज बरसातमें लगाये जायें, वे कमसे कम १२-१५ हाथ दूर-दूरपर लगाये जायें। जो

बीज जाड़े या गर्मियोंमें लगाते जाते हैं उनके लिये मचान बनाये विना भी काम चल सकता है। इस अवस्थामें जमीनमें ही फैलते और फलते हैं। पर इसके लिये जमीनकी सफाई आवश्यक है। अधिक संख्यामें फल चाहनेवालोंको उचित है कि फलोंकी बहुत अधिक बड़ा होनेका मौका न दें। मझोले कद्के फलोंको तोड़ते रहनेसे अधिकाधिक नये फल आपही निकलते हैं।

भतुआ या पेठा



भतुआ या पेठा कई रोगोंके लिये लाभदायक बताया जाता है। वैद्य और कविराज लोग जो 'कुष्माण्ड-खण्ड' बनाते हैं और क्षयादि रोगोंसे पीड़ित व्यक्तियोंको सेवनके लिये देते हैं, वह इसीसे बनता है। पेठेकी मिठाई प्रायः सभी जगह बनती है। यह जितना ही पुराना होता है, उतनी ही इसकी कीमत बढ़ती है।

इसका बीज बैसाखसे असाढ़तक बोया जाता है।

इसकी खेती सालमें एक ही बार होती है; पर प्रणाली कोंहड़े या लौकीकी-सी ही है। इसकी लता कोंहड़ेकी तरह बहुत दूरतक विस्तृत नहीं होती। अतः सात या आठ हाथके अन्तरसे इसके बीज लगाये जा सकते हैं। बीजोंको १०।१२ घण्टेतक पानीमें भिंगोकर बोना चाहिये। बीज बोते समय यह देख लेना चाहिये कि भूमि नरम और सरस है या नहीं? यदि वैसी न हो तो खाद मिली हुई मिट्टीको उलट-पुलट कर पानी सींचकर सरस और नरम बना लेना उचित है। इसका भी फल कोंहड़ेकी तरह भारी होता है, इसलिये मचान पूरा मजबूत बनाना चाहिये।

———

पांचवीं क्यारी

पत्र-पुष्पजातीय साग-सब्जियाँ

गोभी

गोभीकी खेती भारतवर्षमें पहले नहीं होती थी। यह विदेशोंसे यहाँ लायी गयी है। पर अब भारतके कोने-कोनेमें गोभीकी खेती होने लगी। सभी श्रेणियोंके लोग इसे बड़ी रुचिसे खाते हैं। जब इसकी नयी फसल बाजारमें आती है, तब यह काफी महँगी मिलती है और केवल शौकीन और धनवान लोग ही इसका भोग लगाते हैं। जब फसल काफी तैयार हो जाती है और बाजार भर जाता है, तब भी इसका दाम अच्छा मिलता है। इसका शाक बहुत ही स्वादिष्ट और रुचि-वर्द्धक होता है।

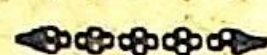
गोभी साधारणतः तीन प्रकारकी होती है। एक पुष्पजातीय, दूसरी पत्रजातीय और तीसरी ग्रन्थि-जातीय या (गाँठ-जातीय) पहली जातिके फूलका ही शाक बनता है, अतः इसे फूल-गोभी कहते हैं। दूसरीके घने बँधे हुए पत्तोंका शाक बनता है, अतः इसे बँधी गोभी कहते हैं। तीसरीकी गाँठका शाक बनता है और इसे गाँठ-गोभी कहते हैं। इसे कहीं-कहीं ओल गोभी भी कहते

हैं। और-और मूलजातीय सब्जियोंकी तरह इसकी गांठें जमीनके अन्दर नहीं, बल्कि जमीनके ऊपर बैठती हैं।

गोभीके पौधे स्थानान्तरित किये जाते हैं और ऐसा किये बिना इसका होना कठिन ही नहीं, प्रायः असम्भव है। गोभीकी खेती करनेवालोंको अपने खेतके विस्तारके मुताबिक कम या बेशी अंकुरदान रखने पड़ते हैं। तीनों प्रकारकी गोभियोंकी खेती प्रायः एक ही प्रकारसे होती है, पर समय आदिका थोड़ा अन्तर पड़ता है। बीजसे अंकुर तैयार करनेका काम सबका एक ही तरहसे होता है और अंकुर तैयार करना ही गोभीकी खेतीके लिए सबसे प्रधान काम है।

बीजसे पौधे तैयार करना

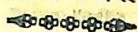
दूमट मिट्टीके साथ खलीकी खाद मिलाकर मिट्टीको एकदम धूलकी तरह भुरभुरी बना लीजिये। इसे अंकुरदानमें भरकर बराबर कर दीजिये। अंकुरदानकी मिट्टी कमसे कम आठ इञ्च ऊँची या मोटी होनी चाहिये। एक तोले बीजसे पौधे तैयार करनेके लिये जितनी मिट्टीका काम हो उसमें ढाई तीन सेर खलीकी खाद और सेर दो सेर पुराने गोबरकी खाद मिलायी जाती है। अंकुरदानकी मिट्टी बराबर हो जानेपर एक सप्ताहतक योंही खुले मैदानमें रख दें। पानीके समय छज्जेके नीचे रख देना ही अच्छा है। सप्ताह भर बाद उसकी जमीनको खुरपीसे उलट-पलट कर दें, और बराबर करके यथासम्भव आध-आध



इञ्चकी दूरीपर बीज छोड़ते जाइये। बीज छींटकर ऊपरसे थोड़ीसी दूमट मिट्टी और भुरभुरा दीजिये, ताकि बीज ढँक जायँ। बोनेके दो दिन बाद पानीकी फुहारें दे कर मिट्टीको नरम और सरस कर दीजिये।

जब पौधे अंकुरित हो आवें, तो अंकुरदानको ऐसी जगह रखिये जहाँ प्रातःकालीन और सन्ध्याकालीन हल्की धूप घण्टे-घण्टे भरतकके लिये लगे। शुरू-शुरूमें कोमल पौधोंको धूपसे बचाना जरूरी है थोड़ी देरतक धूप खिलाकर फिर छज्जेके नीचे रख दीजिये, जहाँ काफी प्रकाश और हवा पौधोंमें लग सके। धीरे-धीरे ज्यों-ज्यों पौधे बड़े हों, त्यों-त्यों उन्हें अधिकाधिक धूप बरदाश्त कराते जाइये। पर यह काम बहुत सावधानीसे करना चाहिये—दोपहरकी तेज धूपमें इन्हें कदापि न छोड़िये। जोरोंकी वर्षामें भी कोमल पौधे नष्ट हो जाते हैं। इसलिये वर्षाके समय भी उन्हें छज्जेके नीचे रखना वांछनीय है। १२-१५ दिनमें जब पौधे कुछ बड़े हो जायँ, तब लम्बी नोकवाली छुरीसे उनकी जड़की मिट्टीको उसकाते रहिये। पर ऐसा न हो कि जड़ कट जायें। नवांकुरित पौधोंमें रोज दिनके तीसरे पहर या हर दूसरे रोज थोड़ा-थोड़ा पानी छिड़कते रहिये। पानी छिड़कनेके पहले हमेशा थोड़ीसी भुरभरी मिट्टी पौधोंकी जड़ोंमें डालते रहिये।

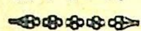
छोटे-छोटे पौधोंमें जब पाँच छः पत्ते निकल आवें, तब उन्हें



और भी बड़े अंकुरदानोंमें स्थानान्तरित करना पड़ता है। इस कामके लिये पहलेसे अंकुरदानोंकी मिट्टी पूर्वकथित प्रणालीसे ठीक कर रखना आवश्यक है। इस बार पौधोंको तीन-तीन इञ्चकी दूरीपर बैठाना चाहिये। पौधोंको जमीनसे उखाड़ते समय जमीनको भलीभाँति तर और नरम कर लेना चाहिये, ताकि सूक्ष्म जड़ें टूटने न पावें। साथ ही उखाड़ते समय बहुत सावधानीसे उन्हें पकड़ना चाहिए, ताकि उनके अंगमें किसी प्रकारकी चोट नहीं आवे। दस-बारह दिन बाद फिर इन पौधोंको कुछ और दूर-दूरपर, दूसरे नये और अपेक्षाकृत बड़े अंकुरदानोंमें बैठाइये। इस बार छः छः या आठ-आठ इञ्चकी दूरीपर पौधे लगाये जाने चाहिए। अब इन पौधोंको क्रमशः सहा सहाकर दोपहरकी धूपमें भी रखना उचित है। जब इनकी जड़का हिस्सा कानी उँगली बराबर मोटा हो जाये; तब खेतमें बैठाना चाहिये।

खेत तैयार करना और पौधे लगाना

असाढ़-सावनमें खेतको अपेक्षाकृत बड़े फालवाले हलोंसे भली-भाँति जोतिये। जब पौधे बैठानेमें २०-२५ दिन बाकी रहें, तब बीघा पीछे ३.४ गाड़ी पुराने गोबरकी खाद और ५।६ मन खलीकी खाद मिलाकर खेतमें क्यारियाँ बना लीजिये। इन क्यारियोंमें हाथ-हाथ भरकी दूरीपर खड़ी और आड़ी लकीरें खींच लीजिये। इन लकीरोंके खींचनेसे क्यारियांमें वर्गाकार


चौके बन जायँगे। इन चौकोंके बीचोबीच अथवा जहाँ दो रेखाएँ परस्पर कटती हैं, वहाँ पौधोंके लिये गड्ढे बनाते जाइये। यदि आपके पास बहुत बड़ी जातिकी गोभीके बीज हों, तो उनकी परस्परकी दूरी और भी अधिक रख सकते हैं। पौधोंके बैठानेकी जो जगह आप तैयार करें, उनमें मुट्ठी-मुट्ठीभर खलीकी खाद डालते जाइये।

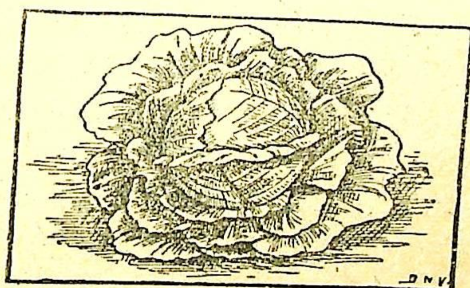
इन गड्ढोंमें पौधोंको दिन ढलते समय बैठाना चाहिये, पर आकाशका रङ्ग-ढङ्ग देखकर—यानी आकाश स्वच्छ होना जरूरी है। अगर घने बादल घिर रहे हों, तो दो-चार दिनकी देरी कर लीजिये, पर जोरोंकी वर्षा होनेका लक्षण देखकर पौधे न लगाइये। खेतमें नये लगाये गये पौधोंको धूपसे बचानेके लिये ताड़के पत्ते आदिकी आड़ अवश्य कर दीजिये। पौधे रोपकर उनके लग जानेके लिये जमीनका रस समझकर पानी भी पटाना पड़ता है। एक या दो सप्ताह बाद खुर्पीसे उनकी जड़के आस-पासकी जमीन खोदते और उसमें थोड़ी-थोड़ी खलीकी खाद छींटते रहिये।

रक्षाके उपाय

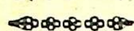
गोभीके खेतमें कीड़ोंका उपद्रव बहुत अधिक होता है और वे सारेका सारा खेत बड़ी शीघ्रतासे नष्ट कर डालते हैं। कीड़ोंसे पौधोंकी रक्षा करनेके उपाय पुस्तकके आरम्भमें ही बता दिये गये हैं। आवश्यकतानुसार इन उपायोंसे काम

लीजिये। गोभीके खेतकी हर क्यारीकी कतारमें एक या दो पौधा तमाखूके लगा दिये जाते हैं। इन पौधोंके रहनेसे गोभीमें कीड़ोंका उपद्रव बहुत कुछ आप-ही-आप घट जाता है। तमाखूके पत्तेकी गन्ध बड़ी तीव्र होती है और कीड़े उससे घबड़ाते और भागते हैं। एक बालटी पानीमें ५-६ सूखी खैनीके पत्ते भिगो रखिये। दो दिन बाद उसे पानीके साथ खूब मसलकर मिला लीजिये—यह तमाखूका घोल कहलाता है। जिन पौधोंमें कीड़े लगें, उनपर इस घोलको थोड़ा-थोड़ा पिचकारीके सहारे छिड़कते रहिये।

बंधी गोभी

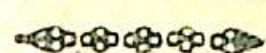


बंधी गोभी जाड़ेमें होती है। इसे करमकल्ला भी कहते हैं। इसके पत्ते सिमटकर एक गोलासा तैयार कर देते हैं। यह गोला ही शाक बनानेके काममें आता है। इसका शाक बहुत स्वादिष्ट होता है; पर जब फसल कुछ अधिक पुरानी हो



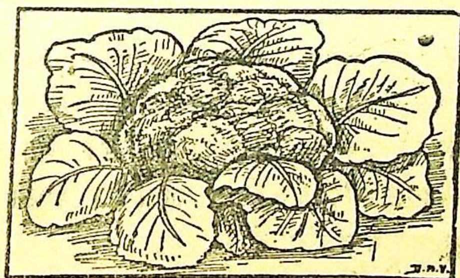
जाती है, तो उसमें एक तीखी गन्ध आती है। स्वाद भी कुछ विकृत हो जाता है। वैसी दशामें लोग पहले एक बार पानीमें खूब उबालकर पानी फेंक देते हैं और तब शाक बनाते हैं। ऐसा करनेसे न कोई गन्ध आती है, न स्वाद ही बिगड़ता है।

इसकी खेतीकी प्रणाली पहले ही बतायी जा चुकी है। सावनसे कार्तिकतक इसके बीज बोनेका समय है। छोटी बंधी गोभियोंके पौधे हाथ-हाथ भरपर बैठाये जा सकते हैं, पर जो बहुत बड़े आकारकी होती है, उन्हें डेढ़-डेढ़ और दो-दो हाथपर भी बैठाते हैं। खेतमें पौधोंको रोपनेके बाद एक सप्ताहतक हर दूसरे रोज हल्की सिंचाई करनी पड़ती है। जब पौधे लग जाते हैं, तब १२-१४ दिन बाद जमीन खुरपीसे उलट-पलट दी जाती है। घास-पात उग आये हों, तो उन्हें भी समय समयपर साफ करते रहना चाहिये। इसकी फसल तैयार होनेमें प्रायः ढाई महीनेका समय लगता है। पौधोंके कुछ बड़े होनेपर जड़की मजबूतीके लिये समय-समयपर मिट्टी भरनी पड़ती है। खेतका रस समझकर पानी भी पटाना पड़ता है। अधिकसे अधिक ७-८ बार सिंचाई करनेकी जरूरत होती है। बंधी गोभीके पौधोंपर भी कीड़े बुरी तरह आक्रमण करते हैं। उनकी ओर विशेष ध्यान रखना चाहिये। पौधोंका निरीक्षण प्रतिदिन करना चाहिये। बंधी गोभीके जो खेत माघतक खाली हो जायें, उनमें बैंगनकी खेती की जा सकती है, पर खेतमें एक बार फिर नये सिरेसे खाद डालकर।



गोभीकी खेती करनेवालोंको अपने खेतके अन्दाजसे ही पौधे नहीं तैयार करने चाहिये। उन्हें सदा कुछ अधिक पौधे अंकुर-दानों या गमलोंमें रखने पड़ते हैं। धूपसे, वर्षाकी चोटसे या कीड़ोंके उपद्रवसे अथवा अन्य कारणोंसे जो पौधे नष्ट हो जाते हैं, उनके खाली स्थानोंकी पूर्ति इन पौधोंसे की जाती है और कुछ पौधे अनावश्यक होनेपर बेचे भी जा सकते हैं।

फूल गोभी



फूल गोभी भी जाड़ेके मौसममें होती है। इसके फूलका ही शाक बनता है। कुछ लोग इसकी कोमल पत्तियोंका भी शाक बनाते हैं। देशी फूल गोभीकी अपेक्षा विलायती और अमेरिकन फूल गोभी अच्छी होती है। इसके फूलको छोटे-छोटे टुकड़े करके घी या तेलमें तलकर भी लोग खाते हैं।

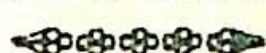
खेती करनेकी प्रणाली पहले बताई जा चुकी है। असाढ़-से आश्विनतक इसका बीज बोया जाता है। फूल गोभीके

पौधोंको खेतमें हाथ-डेढ़ हाथकी दूरीसे बैठाना चाहिये। पौधे लगानेके १२-१५ दिन बाद उनकी जड़ोंमें मिट्टी भरनी पड़ती है। मिट्टी भरते समय खलीकी खाद थोड़ी-थोड़ी मिलाते जाइये। सिंचाई सोहनी और अन्यान्य सभी काम उसी प्रकार किये जाते हैं जिस प्रकार बन्धी गोभीके लिये बताये गये हैं। सिंचाई करनेके दो दिन पहले सोहनी और निरौनी कर लेनी पड़ती है।

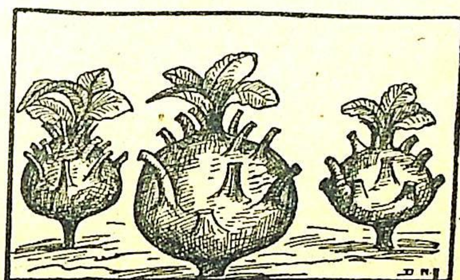
पौधोंमें जब फूल दिखाई दें, तब उन्हें सींचनेके लिये नौसादरका घोल बना लेना बहुत लाभदायक होता है। एक बड़े चहबच्चेमें डेढ़-दो सेर नौसादर घोलकर उसीसे थोड़ा-थोड़ा पानी सब पौधोंमें दे देना चाहिये। फूल कुछ बड़ा हो आवे, तो पौधेकी जड़की तरफसे दो एक पत्ते तोड़कर फूलको ढँक देना चाहिये। इससे फूल कोमल और सरस बना रहता है। बीघेमें ४ से ६ हजारतक फूल गोभियाँ होती हैं।

गाँठ या ओल गोभी

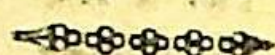
बन्धी गोभी या फूल गोभीका जैसा उत्तम शाक बनता है, वैसा इसका नहीं बनता। इसमें सलगमकी तरहकी एक गन्ध होती है। जो लोग लहसुन प्याज आदि तीव्र गन्ध-विशिष्ट मसाले खाते हैं, वे इसे अधिक पसन्द करते हैं। कारण, गरम मसाले आदिसे इसके गन्धकी कटुता जाती रहती है और स्वाद भी अच्छा हो जाता है।



इसकी खेतीकी प्रणाली भी वैसी ही है, जैसी बन्धी या फूल गोभीकी। इसका बीज सावनसे अगहनतक बोया जाता है। फूल गोभी या बन्धी गोभीकी अपेक्षा इसकी खेती कुछ सहज है। फूल या बन्धी गोभीकी तरह इसके पौधोंको तीन-चार बार स्थानान्तरित करना नहीं पड़ता—एक बार स्थानान्तरित करना पर्याप्त है। इसके पौधे खेतमें एक-एक बालिश्तपर



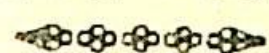
बैठाये जा सकते हैं। खेतमें जड़ जमानेतक नित्य हल्की सिंचाई करनी पड़ती है। जब वे जड़ जमा लेते हैं, तब बीच-बीचमें सोहनी या निरौनी की जाती है और खेतके रसको समझकर १२-१४ दिनोंपर सिंचाई की जाती है। जमीनका रस जब कुछ मर जाये, तब खुरपीसे जड़ोंमें आस-पासकी मिट्टी भुरभुरी कर दी जाती और कुछ मिट्टी जड़में भर दी जाती है। यह काम करते समय जड़ोंकी मिट्टीमें थोड़ी-थोड़ी खलीकी खाद मिला दें तो अच्छा है। गाँठ या ओल गोभीको बहुत बड़ा


होनेका मौका देना ठीक नहीं। अत्यधिक पुष्ट होनेपर इनकी गाँठोंमें रेशे पड़ जाते हैं और स्वाद भी बिगड़ जाता है। इसकी कोमल गाँठोंका ही शाक अच्छा बनता है। डेढ़-दो महीनेके अन्दर ही इसकी फसल खानेके योग्य हो जाती है। इसके पौधे बन्धी या फूल गोभीकी अपेक्षा घने बोये जाते हैं। इसलिये बीज भी उसी हिसाबसे लेकर अधिक पौधे तैयार करने चाहिये। जो लोग इसकी खेती विस्तृत रूपसे करना नहीं चाहें, वे बन्धी या फूल गोभीके साथ अथवा आलूकी क्यारियोंमें, बीच-बीचमें २-४ करके लगा सकते हैं।

सलाद



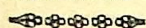
यह विटामिन युक्त विशुद्ध भारतीय सब्जी है। बनस्पति-शास्त्रवेत्ताओं और आयुर्वेदज्ञान-सम्पन्न व्यक्तियोंको इसके गुणागुणकी भली-भांति छानबीन करनी चाहिये। इसका सेवन



यूरोपियन और अधिक पढ़े-लिखे पाश्चात्य रीति-नीतिके अनुयायी लोग बहुतायतसे करने लगे हैं। इसका शाक स्वादिष्ट और अच्छा होता है। यह पाचक गुण विशिष्ट शाक है। यह पहले हिमालयकी तराईमें योंही इधर-उधर घासकी तरह उपजता और नष्ट हो जाता था। पहाड़ी लोग कभी-कभी इसका शाक बनाते थे। बादको यूरोपियन लोगोंकी इसपर दृष्टि पड़ी और वे इसकी जाँच करने लगे। अब तो इसकी विधिवत् खेती होने लगी है। यूरोप और अमेरिकामें इसकी खेती यहाँसे अधिक होती है। खेती होनेसे इस पौधेकी बहुत उन्नति भी हुई है। देखनेमें यह प्रायः बन्धी गोभीकी तरह ही होता है। पर इसके पत्ते वैसे गंठे हुए नहीं होते—ढीले होते हैं। कुछ पत्ते फैले रहते हैं और कुछ सिमटे हुए।

हल्की दूमट मिट्टीमें इसकी उपज अच्छी होती है। अधिक वर्षा और गर्मीमें यह प्रायः नष्ट हो जाती है। इसके खेतमें बीघा पीछे ढाई तीन गाड़ी गोबरकी खाद डाली जाती है। भेड़-बकरियोंकी लेंड़ी भी इसके लिये अच्छी खाद है। इसकी जमीनमें जोत अच्छी और गहरी होनी चाहिये।

गोभीकी तरह इसके पौधे एक या दो बार स्थानान्तरित किये जाते हैं। पौधे अंकुरदानोंमें तैयार करने पड़ते हैं। एक बीघेमें ३।४ तोलेतक बीज लगता है। इसके बीजके अंकुरित होनेमें कभी कभी बीस-बाईस दिन लग जाते हैं। ३।४ इञ्चके होनेपर इन्हें स्थानान्तरित करना पड़ता है। जब ६।७ इञ्चके हो जाते हैं,

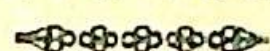


तब खुले खेतमें एक-एक हाथके अन्तरपर लगाये जाते हैं। इसके बीज भादोंके मध्यसे लेकर कातिकतक बोये जाते हैं। जबतक पौधे खेतमें जड़ नहीं जमा लेते, तबतक इनको धूपसे बचानेके लिये ताड़ आदिके पत्तोंसे आड़ कर देनी पड़ती है। इसके अतिरिक्त इसकी पत्तियाँ स्वभावतः कुछ ऐसी कोमल होती हैं कि इन्हें झाँझर मचानोंके नीचे लगाना ही अधिक अच्छा होता है। मचानपर चढ़नेवाली लताओंके नीचेकी खाली जमीनमें भी इनकी खेती हो सकती है। डेढ़ महीनेमें सलाद खाने लायक हो जाता है।

फूल लगनेके पहले ही इन पौधोंको उखाड़ लेना चाहिये, क्योंकि फूल लग जानेपर इनका स्वाद वैसा अच्छा नहीं रह जाता।

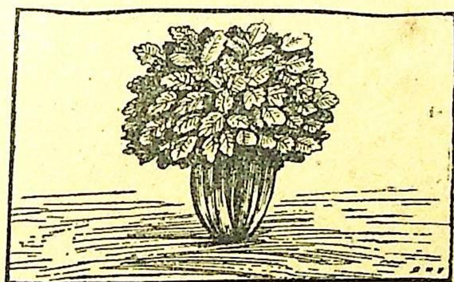
सिलैरी

सिलैरी भी यूरोपियन लोगोंका बहुत प्रिय शाक है। भारतवासी अब भी इसका कम प्रयोग करते हैं। पर लाभ दायक होनेके कारण इसकी खेती दिन-दिन बढ़ रही है। इसके कोमल डण्ठलों और पत्तियोंका शाक बनता है। जो लोग मचानपर उगनेवाली लतरदार साग-सब्जियाँ उपजाते हैं, वे मचानके नीचेवाली जमीनमें इसकी खेती कर सकते हैं। तेज धूपसे इसके कोमल डण्ठलोंको बचाना आवश्यक है। गोभी आदिकी तरह इसके भी पौधे पहले अंकुरदानोंमें तैयार कर



लेने पड़ते हैं। इसका बीज अंकुरित होनेमें १०।१५ दिनतकका समय लेता है।

दूमट मिट्टी इसके लिये अच्छी होती है। खेतको खूब जोत-कोड़ और मिट्टीको फोड़कर भुरभुरा बना लेना चाहिये। क्यारियोंमें एक-एक हाथ चौड़े और एक-एक बालिश्त गहरे नाले बना लिये जाते हैं। इन नालोंमें गोशालाके बुहारन और सड़े हुए गोबरकी खाद प्रचुर मात्रामें मिला ($\frac{5}{8}$ मिट्टी और $\frac{3}{8}$ खाद)



दी जाती है। जब पौधे ५।६ अंगुलके होते हैं, तब इन नालोंमें एक-एक फुटकी दूरीपर बैठा दिये जाते हैं। ज्यों-ज्यों पौधा बढ़ता जाये, त्यों-त्यों उसकी जड़में मिट्टी भरते जाइये। इस प्रकार पौधोंकी हरएक कतारके पास एक-एक नाली सिंचाईके लिये बन जाती है।

सिलैरीकी जमीन हमेशा सरस होनी चाहिये। इसलिए इसमें गोभीकी अपेक्षा अधिक सिंचाई करनी पड़ती है।

सिंचाईके दो दिन पहले खुरपीसे पौधोंके आसपासकी जमीन खोद दी जाती है। इसके साथ-साथ थोड़ी-थोड़ी खाद भी डालते रहना चाहिए।

सावनसे कार्तिकतक इसके बीज बोनेका समय है। तीन-चार महीनोंमें इसका पौधा शाक बनानेके लायक होता है।

पालक या पालम

पालक, पालकी या पालम पत्र-जातीय शाकोंमें सर्वोत्तम होता है। यह विशुद्ध भारतीय वनस्पति है। इसके कोमल और पुष्ट दोनों प्रकारकी पत्तियोंका शाक बनता है और दोनों ही सुस्वादु, रुचिवर्द्धक और रेचक होते हैं। इसकी जड़ोंको भी खूब साफ करके अच्छी तरह धोकर आलूके साथ डालकर शाक तैयार करते हैं। इसकी जड़ें स्वादिष्ट और मीठी होती हैं। रङ्ग-भेदसे पालक दो प्रकारका होता है—लाल और हरा। लाल कम होता है।

यों तो इसकी खेती किसी भी मौसममें प्रचुर जल सींचकर की जा सकती है; पर अच्छा समय आश्विनके आरम्भसे लेकर अगहनतक है। इस समय पालक उपजता है, शिशिर ऋतुके कारण उसमें मिठास अधिक होती है।

यह हल्की दूमट मिट्टीमें अच्छा होता है। गोशालाके बुहारन और पुराने गोबरकी खाद बीघा पीछे दो गाड़ी डाली जाती है। जमीन खूब जोत-कोड़कर ढेले तोड़ लिये

जाते हैं और बीज छींट दिये जाते हैं। बीजको चौबीस घण्टे तक भिगो लेनेसे अंकुर आसानीसे और शीघ्र निकलते हैं। पालकके खेतकी जोत गहरी होनी चाहिये।

पौधे अगर बहुत घने हों, तो बीच-बीचसे जड़ सहित उखाड़कर कुछ पौधे अन्यत्र बैठा दिये जा सकते हैं। जो लोग थोड़ीसी भूमिमें शौकिया पालमकी खेती करना चाहते हों, वे अंकुरदानोंमें पौधे तैयार करके ३-४ इञ्च बड़े होनेपर खेतमें एक-एक बालिश्तकी दूरीपर लगा सकते हैं। बीच-बीचमें सोहनी करनी पड़ती है, जमीनको खुरपीसे खोदते रहना पड़ता है और आवश्यकतानुसार सिंचाई भी करनी पड़ती है। पालम पानी अधिक चाहता है— यह बात सदा ध्यानमें रखने योग्य है। पौधे जब कुछ बड़े हो जायें; तब उनकी कुछ पत्तियाँ टूँग या खोंट लेनेसे वे अधिक बढ़ते हैं।

गेन्धारी या चौलाई

यह विशुद्ध भारतीय शाक है। इसकी कोमल पत्तियाँ और डण्ठलोंका शाक बहुत ही स्वादिष्ट होता है। इसके सेवनसे मेदा साफ रहता है। पाकस्थलीकी क्रिया सुनियन्त्रित होती है। सावनके सिवा और महीनोंमें सागका सेवन किया जा सकता है।

सालमें दो बार इसकी खेती की जाती है। पहली बार चैतसे असाढ़तक और फिर आश्विन-कार्तिकमें इसके बीज

बोते हैं। इसके बीज बहुत ही छोटे होते हैं। बहुत छोटे बीजोंको पाँच-छ गुनी सूखी भुरभुरी मिट्टी मिलाकर खेतमें छींटना या बोना चाहिये। बीघेमें पाव-डेढ़ पावतक बीज लगता है।

बोनेके पहले खेतको भली-भांति जोत-कोड़कर नरम कर लेना चाहिये। मिट्टीके ढेले तोड़कर खेतकी धूलिके समान बना लेते हैं। खाद भी जो मिलायी जाती है, उत्तम रूपसे चूर्ण कर ली जाती। सागकी खेतीके लिये जमीन खूब सरस होनी चाहिये। दूमट मिट्टीकी अपेक्षा कभी-कभी चिकनी मिट्टीमें इसकी खेती अच्छी होती है।

खेत अच्छी तरह तैयार करके तब बीज बोना या छींटना चाहिये। बीज छींटनेके बाद ऊपरसे हाथ फेर देना चाहिये, ताकि वे ऊपरी सतहपर पड़े न रह जायें। इन बीजोंके सबसे बड़े दुश्मन हैं छोटी-छोटी लाल चीटियाँ। इनके बचनेके लिये उन उपायोंका अवलम्बन कीजिये, जो ग्रन्थके आरम्भमें बताये गये हैं। पौधोंके उग आनेपर जमीनकी सरसता बनाये रखनेके लिये बरसातमें कम और जाड़ेमें अधिक सिंचाई करनी पड़ती है।

जब पौधे कुछ बड़े हो जायें, तब उन्हें शाकके लिए एकदम जड़से न उखाड़कर एक-दो इंच छोड़कर खोंट लेना चाहिये इससे पौधे अधिक शाखा-प्रशाखाएँ फेंकते हैं। इस प्रकार एक ही पौधेसे हम कई बार फसल काट सकते हैं। बीच-बीच

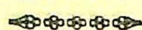
में सोहनी अवश्य की जानी चाहिये, नहीं तो घास उगकर असली पौधोंका रस चूस लेगी और पौधे खराब हो जायेंगे।

ठढ़िया

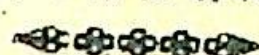
यह भी भारतकी मौलिक वनस्पति है। इसकी पत्तियोंका तो शाक बनता ही है, इसके मोटे डण्ठलोंके भीतरसे जो कोमल गूदा निकलता है, वह बहुत ही उपादेय होता है। खानेमें वह मीठा होता है। ठढ़ियाके पौधे तीन-चार हाथतक लम्बे होते हैं और इसका डण्ठल भी काफी मोटा हो जाता है। पर इसे इतना लम्बा होने नहीं देना चाहिये। इससे इसके रेशे कड़े हो जाते हैं और शाक नीरस हो जाता है। रङ्ग-भेदसे यह दो प्रकारका होता है—लाल और हरा। इसे कलकत्तेमें डाँठा साग कहते हैं और बिहारमें ठढ़िया। हरे शाकमें अधिक विटामिन होता है। दोनोंके बीज बहुत छोटे, चिकने और काले होते हैं।

भारतीय वनस्पति होनेके कारण ये सब शाक प्रायः हर मौसममें भारतमें उपजते हैं और इनकी खेती बारहो मास की जा सकती है। इनके ऊपर मौसमका असर कम पड़ता है। इसीलिये ये सर्वत्र पैदा होते हैं। इनके लिये खास चीज जल और खाद है।

हरे ठढ़ियाके बीज बैसाख-जेठमें और लालके बीज फागुन


से असाढ़तक बोये जा सकते हैं। गाँवों या शहरोंकी पड़ती जमीनमें इस शाककी उपज अच्छी होती है। दूमट या चिकनी दोनों प्रकारकी मिट्टीमें यह उपजता है। पर चिकनी मिट्टीवाले खेतको सदा नरम बनाये रखना पड़ता है। दूमट मिट्टीवाले खेत कुछ जल्द सूख जाते हैं इसलिये उन्हें अधिक सींचना पड़ता है। बोनेकी प्रणाली इसकी वैसी ही है, जैसी गेन्धारीके शाककी। अतः दुहरानेकी कोई आवश्यकता नहीं। बीज अंकुरित हो जानेपर आरम्भमें दो-तीन दिनके अन्तरसे पानी पटाया जाता है, बादको जमीनका रस समझकर।

हाँ, एक बातकी ओर विशेष ध्यान रखना पड़ता है, वह यही कि इसके पौधे घने नहीं हों—दो पौधोंके बीच कमसे कम हाथ भरका अन्तर जरूर हो। घने होनेसे पौधे फैलने या डालियाँ फेंकनेका मौका कम पाते हैं। इसके अलावा जब पौधे हाथ डेढ़ हाथके हो जायँ, तब उनके सिरे तोड़ लिये या हँसियासे काट लिये जाने चाहिये। इससे पौधे बहुत लम्बे नहीं होंगे; बल्कि बहुतेरी, नयी शाखाएँ छोड़ेंगे। इन शाखाओंको भी समय समयपर खोंट लिया जा सकता है। ये तोड़े या छांटे हुए अंश भी बेंचनेके काम आ सकते हैं। इस प्रकार एक ही पौधेसे हम कई बार फसल काट सकते हैं और अन्तमें सुपुष्ट होनेपर जड़ सहित पौधेको उखाड़कर पुनः बेंच सकते हैं। यदि पौधे घने होंगे, तो यह सुभीता नहीं मिलेगा।



बथुआ

यह भी भारतीय वनस्पति है। इसके कोमल पौधेका साग बनता है। इसका साग लाभदायक और स्वादिष्ट होता है। यह रक्त-शोधक और रेचक बताया जाता है। आलू या बैंगनके साथ मिलाकर भी इसका शाक बनता है।

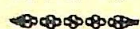
यह शाक जाड़ेमें उपजता है। कुछ लोग चने-मटर आदि रबीकी फसलके साथ भी इसे बोते हैं। बरसातके बाद इसकी खेती की जाती है। दूमट और चिकनी दोनों प्रकारकी मिट्टीमें यह उपजता है।

जमीन जोत-कोड़ और ढेले तोड़-फोड़कर पहले बराबर कर ली जाती है। इसके बीज भी बहुत छोटे होते हैं। इसलिये मिट्टी मिलाकर बीज छींटते हैं। इसके पौधे एक-डेढ़ फुट लम्बे होते हैं। इसलिये पौधोंके लगनेपर एक-एक बालिश्तकी दूरी परके पौधोंको छोड़ देना और बाकीको उखाड़ फेंकना चाहिये। बीघेमें डेढ़-दो गाड़ी गोबरकी खाद पर्याप्त है। इसका बीज भादोंके अन्तसे कार्तिकके आरम्भतक बोया जाता है।

एक बालिश्तके होनेपर पौधोंको खोंट लेनेसे अधिक और कई बार फसल मिलती है। महीने डेढ़ महीनेमें यह खानेके लायक हो जाता है।

सोआ

यह भी भारतीय शाक है। इसमें बड़ी सुन्दर गन्ध होती है। इसकी कोमल पतली-पतली पत्तियाँ देखनेमें बड़ी



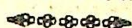
सुन्दर होती हैं, आलू, बैगन आदिके साथ मिलाकर इसका शाक बनाते हैं। पालकके शाकके साथ तो थोड़ा सा सोआ अवश्य ही मिलाते हैं। इसका पौधा पीसकर पकौड़ीमें भी डाला जाता है। पाचक गुण-विशिष्ट है।

हल्की दूमट और सरस मिट्टीमें इसकी उपज अच्छी होती है। गोबरकी खाद डाली जाती है। जमीनकी जोत अच्छी होनी चाहिये। पोली और नरम मिट्टीमें यह शीघ्र बढ़ता है। इसका बीज छींटकर बोया जाता है, पर कहीं-कहीं लोग शौकसे गमलोंमें भी लगाते हैं। दो पौधोंके बीचमें कमसे कम ६-७ अंगुलका अन्तर होना चाहिये। आश्विनसे अगहनतक इसका बीज बोया जाता है। जमीनका रस समझ कर पानी सींचते रहना चाहिये। यह पानी अधिक चाहता है। महीनेमें एक या दो बार पौधोंकी जड़ोंके पाससे घास उखाड़कर मिट्टी हल्की करते रहना चाहिये।

इसकी बीज मसालेके काम आता है और कुछ लोग बीजोंके लिये ही इसकी खेती करते हैं। वे शाकके लिये पौधोंको केवल खोंटते हैं, उखाड़ते नहीं।

मेथी

मेथी कई काममें आती है। साग-तरकारीमें मसालेके लिये यह व्यवहृत होती है। यह सुगन्धि बढ़ाती है। इसके पौधेका शाक बैगनके साथ और यों भी बहुत अच्छा होता है। इसके



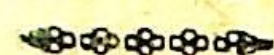
फलोंको भिंगोकर बहुत ही उत्तम लेई (लासा Paste) बनती है। ढफ, ढोलक, डुग्गी, तबला आदि वाद्य यन्त्र बनानेवाले इसीसे चमड़ेको लकड़ीके साथ साटनेका काम लेते हैं। कहीं-कहीं इसकी लेईका उपयोग स्त्रियाँ बालोंके लिये भी करती हैं, पर यह चाल पुरानी हो चली है। आजकल स्त्रियाँ इसके बदले पोमेडसे काम लेती हैं।

हल्की, दूमट मिट्टी इसके लिये अच्छी है, पर मिट्टीमें नोन रहना इसके लिये हानिकारक होता है। जमीनको खूब जोत-कोड़कर ढेले फोड़ लिये जाते हैं। पुराने सड़े हुए गोबरकी खाद डाली जाती है। खादकी कमी और नोनकी अधिकतासे इसके कोमल पौधे टूट-टूट कर गिर पड़ते हैं।

आश्विन कात्तिकमें इसका बीज बोया जाता है, बोनेके पहले बीजको आध घण्टेतक भिगो लेना अच्छा है। इससे पौधे शीघ्र अंकुरित होते हैं। इसके पौधे एक-डेढ़ फुटतक बड़े होते हैं। ६।७ इञ्चके होनेपर पौधोंको खोंटनेसे अधिक शाखाएँ निकलती हैं और वे फिर खोंटे जा सकते हैं। जो लोग बीजके लिये मेथी बोते हैं, उन्हें कभी पौधोंको खोंटना नहीं चाहिये। मेथीके बीज फलियोंमें लगते हैं।

पोय

इसका शाक बङ्गालमें बहुत अधिक खाते हैं। यह बहुत ही पुष्ट, परन्तु उष्णवीर्य होता है। इसका शाक स्वादिष्ट होता



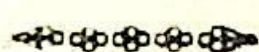
है। पोंयके पत्तों और डण्ठलोंका शाक बनता है। पोंयकी लता होती है। बरसातमें यह लता बहुत अधिक बढ़ती है और उस समय इसके लिये मचान बनाये बिना काम नहीं चलता। पर गरमीके दिनोंमें इसकी लता जमीनमें ही भली-भाँति फैलती है। लोग इसे मकानके छप्परोंपर भी चढ़ा देते हैं। इसके पौधेसे एक लसीला पदार्थ निकलता है।

दूमट मिट्टीमें पोंयकी खेती होती है। जमीनको भली-भाँति जोत-कोड़कर उसमें पुराने सड़े हुए गोबर और थोड़ी खलीकी खाद डाली जाती है। तालाबों या गड्ढोंकी अन्दरकी सड़ी हुई मिट्टी इसके लिये बहुत ही उपयोगी खाद है। इसकी जड़का मिट्टी पोली और सरस होनी चाहिये।

इसका बीज तैयार किये हुए खेतमें अथवा अंकुरदानमें बोया जा सकता है। बोनेका अच्छा समय चैतसे लेकर असाढ़तक है। गर्मीके दिनोंमें सिचाई अत्यावश्यक है। बरसातमें अधिक पानी जड़में जमने देना ठीक नहीं। जड़को मिट्टी भरकर ऊँचा कर देना चाहिये। लता जब ५।६ फुटकी हो जाये तो उसे खोंट देनेसे अधिक शाखाएँ निकल आती हैं। कलकत्तेमें इसके शाकसे काफी दाम मिलता है।

पुदीना

इसकी पत्तियाँ चटनी बनानेके काममें आती हैं। पुदीना बहुत ही लाभदायक और विशुद्ध भारतीय पौधा है। इसका



अर्क उतारा जाता है। यह मेदेको ठण्ढा रखता और पाचन-क्रियामें उसकी बड़ी मदद करता है। इसमें बड़ी अच्छी गन्ध होती है। मतलीके समय इसकी गन्ध मात्रसे चित्तको शान्ति मिलती है। गर्मीके दिनोंमें, शर्बत या ठण्ढाईमें इसके अर्कका एक-दो कतरा डालकर सेवन करनेसे तबीयत प्रसन्न हो जाती है।

इसकी मिट्टीमें अधिक भाग चिकनी मिट्टीका हो, तो अच्छा है। भेंड़-बकरीकी लेंड़ी इसके लिये अच्छी खाद है। इसका बीज नहीं होता। मोटी डालें या जड़ें ही बोयी जाती हैं। यह बहुत अधिक पानी माँगता है। गर्मीके दिनोंमें तो प्रायः रोज ही इसे भरपूर पानीसे सींचना पड़ता है। हाँ, जाड़ेमें सिंचाई कुछ कम करनी पड़ती है। एक बार थोड़ेसे पौधे लगाकर क्रमशः उनसे बहुत पौधे तैयार किये जा सकते हैं। प्रतिवर्ष जमीन बदलते रहनेसे ये कभी नष्ट नहीं होते। पुदीना लगानेके लिये जमीन पहलेसे तैयार रखनी पड़ती है।

धनिया

धनियांके पौधेमें भी बड़ी सुगन्धि होती है। इसके पत्ते शाक, दाल और पकौड़ियोंमें डाले जाते हैं। इसकी कई प्रकारसे चटनी बनाते हैं। यह रुचिवर्द्धक, स्फूर्ति लानेवाला और चित्तको प्रसन्न करनेवाला होता है। इसके दाने मसालेके काममें आते हैं। धनियाका उपयोग दवाके लिये भी होता

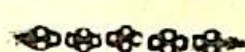
है। दूमट और चिकनी दोनों प्रकारकी मिट्टीमें इसकी फसल होती है। पुराने सड़े हुए गोबरकी खाद इसके लिये अच्छी होती है। आश्विनमें हस्त नक्षत्र बरस जानेके बाद इसके बीज बोये जाते हैं; क्योंकि जोरोंकी वर्षामें इसके पौधे नष्ट हो जाते हैं।

बोनेके पहले इसके बीजोंको कपड़ेकी पोटलीमें बाँधकर ८-१० घण्टेतक भिगो लेनेसे शीघ्र अंकुरित होते हैं। अंकुरित होनेके पहले भी इसके खेतको हल्की सिंचाई दी जा सकती है। जब पौधे निकल आवें, तब दो-दो या तीन-तीन दिनके अन्तरसे भली भांति सिंचाई कर दी जाती है।

जब पौधे ५-६ इञ्चके हो जायें, तो उन्हें ऊपर ही ऊपर खोंट-कर काममें लाना चाहिये। यदि पौधे बहुत घने हों, तो बीच-बीचसे कुछ पौधे उखाड़ लेने चाहिये। खोंट लेनेसे पौधे शाखा-बहुल बनते हैं, कोई हानि नहीं होती। पर जो लोग बीज या दानोंके लिये धनिया बोते हैं, उन्हें फूल लगनेके बाद पौधोंको खोंटना या टूँगना नहीं चाहिये।

सजना

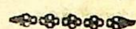
सजना वृक्षजातीय उद्भिद है। इसके पेड़ कलमी आमके पेड़के समान ऊँचे होते हैं। इसकी नवजात कोमल पत्तियों, कलियों और फूलोंका भी शाक बनता है। पर इसकी लम्बी



फलियाँ ही शाकके काममें अधिक आती हैं। यह हाजमा बढ़ाता है; पित्त शान्त करता है और कोठा साफ रखता है। पहले इसका शाक अधिकतर बङ्गालमें ही लोग खाते थे, पर अब प्रायः सभी प्रान्तोंमें न्यूनाधिक रूपमें इसकी खेती होने लगी है। यह विशुद्ध भारतीय सब्जी है।

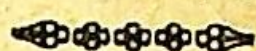
इस पुस्तकमें जिन साग-सब्जियोंकी खेतीको बातें अबतक लिखी गयी हैं, उनके खेतमें इसके पेड़ कदापि नहीं लगाने चाहिये। कारण, इसके पौधे बहुत बड़े और छायादार होते हैं। हां, सब्जी बागकी उत्तरी सीमापर एक कतारमें इसके कुछ पेड़ लगाये जा सकते हैं। उत्तरी भागमें लगानेसे खेतमें छाह नहीं पहुंचती—खासकर जाड़ेके दिनोंमें। जाड़ेमें सूर्य दक्षिणायन रहते हैं और उस समय शाक भाजीके खेतमें जो धूप आती है, वह दक्षिणसे आती है। इसलिये यदि ये पेड़ उत्तर दिशामें रहेंगे, तो कोई विशेष हानि नहीं होगी, बल्कि जब इनका फलना खतम हो जाये, तब इनपर लत्तरदार साग-सब्जियाँ (जैसे, करेला, खीरा, सेम, तरोई आदि) की लताएँ चढ़ायी जा सकती हैं।

इनके पौधे मोटी डालियोंसे उत्पन्न होते हैं। बरसातके पहले इनके लिये जमीन तैयार कर ली जाती है। कमर भर या छातीभरके गड्ढे खोदे जाते हैं। एक-एक गड्ढेकी चौड़ाई तीन हाथकी होती है। गड्ढे चौकोर और गोल दोनों प्रकारके बनाये जाते हैं। इन गड्ढोंमें दूमट मिट्टी और पुराने सड़े हुए



गोबरकी खाद (तीन-चार टोकरी) मिलाकर भर दी जाती है। गोबरकी खाद जितनी ही पुरानी हो, उतनी ही अच्छी होती है। कमसे कम दो वर्षकी पुरानी तो अवश्य हो। ताजे गोबरसे पौधे जलकर नष्ट हो जाते हैं। बरसातमें जब दो चार पानी बरस जाये, तब इन गड्ढोंकी मिट्टीको एक या दो बार उलट-पलट लेते हैं और फिर मोटी, पुष्ट और तिर्छी कटी हुई डाल बोयी जाती है। यदि जमीन तर हों तब तो सींचनेका काम नहीं पड़ता, पर वर्षाकी कमी होनेपर कुछ दिनोंतक हर रोज या हर दूसरे रोज अच्छी तरह सींचते रहना पड़ता है। जब डालियाँ जड़ फैला लें और नये पत्ते देने लगें, तब उनकी जड़को भुरभुरी मिट्टी भरकर ऊँचा कर देना चाहिये ताकि जड़में अधिक पानी भरने न पावे।

सजनाके दो पेड़ोंके बीचमें कमसे कम ७-८ गजका अन्तर होना चाहिये। पास-पास होनेसे पौधोंमें फसल अच्छी नहीं होती। पेड़ोंमें चारों तरफसे धूप और हवाका लगना आवश्यक है। प्रति वर्ष गर्मियोंमें उनकी जड़के आस-पासकी मिट्टी उलट-पलट कर नये सिरेसे खाद डालकर पानी पटाते हैं। सजनाके कुछ पौधे सालमें दो और तीन बारतक फलते हैं। पर अधिकांश एक बार ही फलते हैं। फल चुकनेके बाद ही इनकी डालियाँ भली भांति छाँट दी जाती हैं। जो लोग मोहसे या अज्ञानतासे इन्हें नहीं छाँटते, वे बड़ी गलती करते हैं। छाँटनेसे इनमें नयी शाखा-प्रशाखाएँ बड़ी तेजीसे निकलती हैं और उनमें



फूल-फल भी अधिक होते हैं। पुरानी डालियोंमें यह बात नहीं होती। छाँटनेसे पेड़को कोई नुकसान नहीं पहुँचता। एक बार के लगाये हुए पौधे बहुत दिनतक रहते और फलते हैं; पर हर ७।८ वर्षके बाद इन्हें जड़से उखाड़ फेंकना चाहिये। पर इनके कट जानेसे जो नुकसान हो, उसे पूरा करनेके लिये प्रति दूसरे वर्ष कुछ नये पौधे लगाते रहना चाहिये। कलकत्ता, बनारस आदि बड़े-बड़े शहरोंमें इसकी फलियोंका दाम पूरा मिलता है।

———

परिशिष्ट

(क) विदेशी खाद वांछनीय क्यों नहीं है ?

हिन्दीमें साग-सब्जियोंकी खेतीके विषयमें; जहाँतक हमें मालूम है, अबतक इस प्रकारकी कोई पुस्तक नहीं निकली है। हाँ, कृषि-सम्बन्धी अन्य कुछ पुस्तकें निकली हैं। खादके सम्बन्धमें भी कई पुस्तकें हैं; परन्तु उनमें विदेशी खादोंपर विशेष जोर डाला गया है। हमारे विचारसे भारतके किसानोंके लिये विदेशी खादोंका प्रयोग कई कारणोंसे वांछनीय नहीं है। हम यहाँ संक्षेपमें उन कारणोंपर प्रकाश डालना आवश्यक समझते हैं।

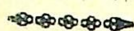
पहली बात यह है कि विदेशी खाद हर हालतमें देशी खाद-की अपेक्षा हमें महँगी मिलेगी। हमारे ग्रामीण किसान जहाँ केवल थोड़ीसी मेहनत और सतर्कतासे ही, बिना पैसे खरचे, कई प्रकारकी खाद अनायास एकत्र कर सकते हैं, वहाँ विदेशी खाद संग्रह करनेके लिये उन्हें काफी पैसे और वह भी एक साथ खरचने पड़ेंगे, जो उनके लिये बहुत ही कठिन है।

दूसरे, विदेशोंकी आब-हवा और भारतकी आब-हवामें भी यथेष्ट अन्तर है। जिस खादका जैसा प्रभाव विदेशोंमें पड़ता है, ठीक वैसा ही यहाँ पड़ेगा, बिना प्रयोग एवं परीक्षा किये

ऐसी बात निश्चयपूर्वक नहीं कही जा सकती। इसके विपरीत कभी-कभी हड्डीके चूरेकी खादके प्रयोगसे भारतमें हानि होती देखी गयी है।

तीसरी बात यह है कि यहाँ यदि खेतीकी प्रणाली खर्चीली और महँगी कर दी जायेगी और इस प्रकार पैदावारमें यदि कुछ उन्नति भी हो जायेगी तो किसानोंको कोई लाभ नहीं होगा। विदेशोंके मुकाबिलेमें वे यदि खर्च करेंगे भी तो उन्हें दाम वैसा नहीं मिलेगा, जैसा विदेशोंमें मिलता है, क्योंकि भारत पैसोंकी दृष्टिसे वर्त्तमान समयमें एक बहुत ही गरीब देश हो रहा है।

इन्हीं बातोंको देखते हुए हमारे विचारसे भारतीय किसानोंके लिये विदेशी खादोंका प्रयोग वांछनीय नहीं है। परन्तु इन बातोंका यह मतलब नहीं कि हम खर्चके कारण देशी खादोंके प्रयोगमें भी किफायत करें। ऐसा करना कदापि उचित नहीं है। इससे नुकसानके सिवा फायदा कभी नहीं होगा। हम समझते हैं कि पूरी किताबको पढ़नेके बाद पाठक खादका महत्व भली भाँति जान गये होंगे। खाद ही पौधोंका प्राण है। हाँ, हमें यह चेष्टा अवश्य करनी चाहिये कि हम देशी खादका संग्रह बहुत कम खर्चमें कैसे करें? यदि हम बराबर खाद एकत्र करनेकी ओर तीव्र दृष्टि रखेंगे और सदा सचेष्ट रहेंगे, तो हमें ऐसे बहुतसे उपाय आप ही सूझने लगेंगे, जिनसे हम आसानीसे पर्याप्त खाद एकत्र करनेमें समर्थ होंगे।

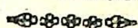


(ख) ट्रैक्टरोंका उपयोग

भारतवर्ष एक विशाल कृषि प्रधान देश है। कृषिके क्षेत्र भी यहाँ बहुत विस्तृत हैं। जल वायु भी कृषि-कार्यके सर्वथा अनुकूल है। इन बातोंको देखकर ट्रैक्टरों या मोटरदार हलों-के द्वारा खेत जोतनेका काम लेना अच्छा और आवश्यक प्रतीत होता है। अन्य देशोंकी समता करनेके लिये भारतको भी ट्रैक्टरोंको उपयोगमें लाना चाहिये। परन्तु जो लोग भीतरी बातोंको जानते हैं, वे ट्रैक्टरोंके प्रयोगका समर्थन नहीं कर सकते।

इसका पहला और प्रधान कारण है, खेतोंका विशृंखल विभाजन और सम्मिलित रूपसे खेती करनेके विषयतमें अज्ञानता। एक-एक किसान या काश्तकारके पास सौ-सौ बीघेकी खेती है सही; परन्तु उसके खेत इतने टुकड़ोंमें बँटे हुए हैं और एक टुकड़ा दूसरेसे इतनी दूर हैं कि वह ट्रैक्टरोंके उपयोगसे लाभ उठानेके बदले हानि ही उठावेगा। सम्मिलित रूपसे व्यापार-वाणिज्य करना तो भारतके पिछले ५०-६० वर्षोंमें, विदेशोंके सम्पर्कमें आनेके कारण बहुत कुछ सीख लिया है पर सम्मिलित रूपसे खेती करना भारतीय किसानोंके लिये एकदम नयी बात है। इसका प्रचार या प्रचलन होना भी, कई कारणोंसे वर्तमान समयमें असम्भव प्रतीत होता है।

एक बात और है। ट्रैक्टर खरीदनेमें एक साथ काफी पूँजी लगती है। इसीलिये बड़े-से-बड़े काश्तकार भी इसे मँगानेका

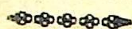


साहस नहीं करते। मामूली किसान या काश्तकारके लिये तो असम्भव ही है। सोचनेकी बात है कि जो किसान हलका फाल टूट जानेपर उसे मरम्मत करानेका भी पैसा मुश्किलसे जुटा पाता है और एककी जगह दो सेर नाज अपने पड़ोसी लुहारको देकर उसे मरम्मत कराता है वह ट्रैक्टर मँगानेका विचार तो शायद सपनेमें भी नहीं कर सकता।

हाँ, ट्रैक्टरोंका प्रयोग हो सकता है और उससे भारतीय किसान लाभ भी उठा सकते है, बशर्ते कि सरकार स्वयं इसके लिये प्रयत्न करे—सरकारी कृषि-विभागके द्वारा भारतीय किसानों-को यौथ रूपसे या सम्मिलित रीतिसे कृषि करनेकी शिक्षा दी जाये और उन संस्थाओंके कार्यमें सहायता पहुंचाई जाये, जो सम्मिलित रीतिसे भारतमें कृषि-कार्यका प्रचलन करनेके लिये खड़ी हों। सरकारी सहायता और प्रोत्साहन पाकर ही भारतीय किसान अग्रसर हो सकते हैं, अन्यथा नहीं। परन्तु भारतीय सरकार इस विषयमें चिन्ता भी करेगी, इसकी अभी आशा नहीं। इसीलिये हमारा कहना है कि उपयोगी होनेपर भी हम ट्रैक्टरोंका प्रयोग नहीं कर सकते और यदि करेंगे, तो अधिक स्थलोंमें हानि ही उठानी पड़ेगी।

(ग) बीज बोनेके अनुकूल ऋतु

जल-वायु और ऋतुके साथ पौधोंका बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है इस बातको कभी भूलना नहीं चाहिये, वरन् बीज बोनेके समय ही यह बात जान लेनी चाहिये कि किस चीज़की खेती

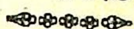


(ख) ट्रैक्टरोंका उपयोग

भारतवर्ष एक विशाल कृषि प्रधान देश है। कृषिके क्षेत्र भी यहाँ बहुत विस्तृत हैं। जल वायु भी कृषि-कार्यके सर्वथा अनुकूल है। इन बातोंको देखकर ट्रैक्टरों या मोटरदार हलों-के द्वारा खेत जोतनेका काम लेना अच्छा और आवश्यक प्रतीत होता है। अन्य देशोंकी समता करनेके लिये भारतको भी ट्रैक्टरोंको उपयोगमें लाना चाहिये। परन्तु जो लोग भीतरी बातोंको जानते हैं, वे ट्रैक्टरोंके प्रयोगका समर्थन नहीं कर सकते।

इसका पहला और प्रधान कारण है, खेतोंका विशृंखल विभाजन और सम्मिलित रूपसे खेती करनेके विषयतमें अज्ञानता। एक-एक किसान या काश्तकारके पास सौ-सौ बीघेकी खेती है सही; परन्तु उसके खेत इतने टुकड़ोंमें बँटे हुए हैं और एक टुकड़ा दूसरेसे इतनी दूर हैं कि वह ट्रैक्टरोंके उपयोगसे लाभ उठानेके बदले हानि ही उठावेगा। सम्मिलित रूपसे व्यापार-वाणिज्य करना तो भारतके पिछले ५०-६० वर्षोंमें, विदेशोंके सम्पर्कमें आनेके कारण बहुत कुछ सीख लिया है पर सम्मिलित रूपसे खेती करना भारतीय किसानोंके लिये एकदम नयी बात है। इसका प्रचार या प्रचलन होना भी, कई कारणोंसे वर्तमान समयमें असम्भव प्रतीत होता है।

एक बात और है। ट्रैक्टर खरीदनेमें एक साथ काफी पूँजी लगती है। इसीलिये बड़े-से-बड़े काश्तकार भी इसे मँगानेका



साहस नहीं करते। मामूली किसान या काश्तकारके लिये तो असम्भव ही है। सोचनेकी बात है कि जो किसान हलका फाल टूट जानेपर उसे मरम्मत करानेका भी पैसा मुश्किलसे जुटा पाता है और एककी जगह दो सेर नाज अपने पड़ोसी लुहारको देकर उसे मरम्मत कराता है वह ट्रेक्टर मँगानेका विचार तो शायद सपनेमें भी नहीं कर सकता।

हाँ, ट्रेक्टरोंका प्रयोग हो सकता है और उससे भारतीय किसान लाभ भी उठा सकते है, बशर्ते कि सरकार स्वयं इसके लिये प्रयत्न करे—सरकारी कृषि-विभागके द्वारा भारतीय किसानों-को यौथ रूपसे या सम्मिलित रीतिसे कृषि करनेकी शिक्षा दी जाये और उन संस्थाओंके कार्यमें सहायता पहुंचाई जाये, जो सम्मिलित रीतिसे भारतमें कृषि-कार्यका प्रचलन करनेके लिये खड़ी हों। सरकारी सहायता और प्रोत्साहन पाकर ही भारतीय किसान अग्रसर हो सकते हैं, अन्यथा नहीं। परन्तु भारतीय सरकार इस विषयमें चिन्ता भी करेगी, इसकी अभी आशा नहीं। इसीलिये हमारा कहना है कि उपयोगो होनेपर भी हम ट्रैक्टरोंका प्रयोग नहीं कर सकते और यदि करेंगे, तो अधिक स्थलोंमें हानि ही उठानी पड़ेगी।

(ग) बीज बोनेके अनुकूल ऋतु

जल-वायु और ऋतुके साथ पौधोंका बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है इस बातको कभी भूलना नहीं चाहिये, वरन् बीज बोनेके समय ही यह बात जान लेनी चाहिये कि किस चीज़की खेती



कब अर्थात् किस ऋतुमें की जाती है। पाठकोंके सुभीतेके लिये यहाँ इसकी एक सूची दे दी जाती है :—

ग्रीष्म ऋतु

वैसाख और जेठके महीने ग्रीष्म ऋतुके हैं। इस ऋतुमें नीचे लिखी चीजोंकी खेती शुरू की जाती है :—कोहड़ा, बोरो या बरबटी, कद्दू या लौकी, भिण्डी या रामतरोई, खीरा, मरिचाई, करेला, तरोई (नैनुआ और भींगा), भतुआ या पेठा, बरसाती मूली, मानकच्चू,, कन्दा, शंखालू, चौलाई या गेन्धारी, सेम, बैंगन या भण्टा। जेठसे कहीं-कहीं फूल गोभीकी भी खेती शुरू करते हैं। अदरख और हल्दीकी भी खेती इसी ऋतुमें शुरू की जाती है, पर ये मसाले हैं और इस पुस्तकमें इनकी खेतीकी विधि नहीं बतायी गयी है।

वर्षा ऋतु

असाढ़ और सावन वर्षा ऋतुमें पड़ते हैं। सेम, भिंडी, देशी शलगम, कोंहड़ा, देशी फूलगोभी, बोरो या बरबटी, टमाटर, गेन्धारी आदिकी खेती इसी ऋतुमें शुरू की जाती है। बन्धी गोभी, गाँठ गोभी, गाजर, चुकन्दर आदिकी भी खेती सावनके महीनेमें आरम्भ करते हैं।

शरद् ऋतु

भादों और आश्विन ये दो महोने शरद् ऋतुके हैं। बन्धी गोभी, फूल गोभी, गाँठ गोभी, बढ़िया या विलायती शलगम



गाजर, टमाटर, धनिया, चुकन्दर, सलाद, पालम, प्याज, लौकी, कोंहड़ा, मेथी, सोआ, आदि साग-सब्जियोंकी खेती इसी समय की जाती है आश्विनके महीनेसे छोटे बैंगन और परोरेकी भी खेती शुरू की जानी चाहिये।

हेमन्त या शिशिर ऋतु

कार्तिक और अगहन ये दो महीने हेमन्त ऋतुके हैं। आलू, परवल या परोरा, कोंहड़ा विदेशी सेम या बीन, पालक या पालम, बैंगन (छोटा) टमाटर, मूली आदि सब्जियोंकी खेती इसी समय शुरू करते हैं।

शीत ऋतु

पूस और माघके महीने शीत ऋतुमें पड़ते हैं। इस ऋतुमें करेला, कोंहड़ा, चैती खीरा, चैती झींगा या तरोई और भिंडीकी खेती शुरू की जाती है।

बसन्त ऋतु

फागुन और चैतके महीने बसन्त ऋतुके अन्तर्गत हैं। इस समयमें करेला, तरोई, खीरा, कद्दू या लौकी, कोंहड़ा, पोंय, भिंडी, बोरा आदि साग-सब्जियोंकी खेती शुरू की जाती है।

* समाप्त *